राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006

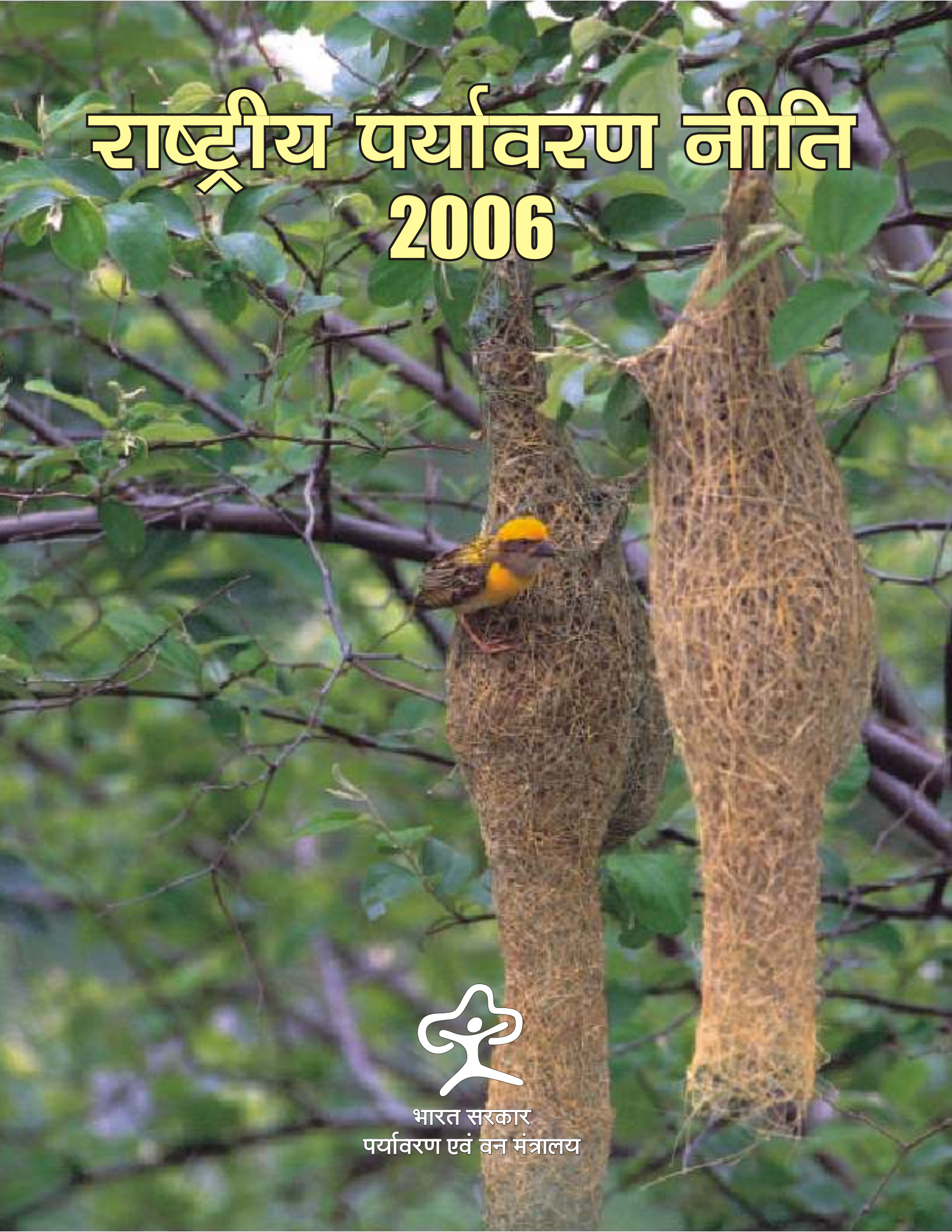

भारत सरकार
पर्यावरण एवं वन मंत्रालय

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006

भारत सरकार
पर्यावरण एवं वन मंत्रालय

विषय सूची

भाग	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
1.	प्रस्तावना	1
2.	मुख्य पर्यावरणीय चुनौतियां : कारण एवं प्रभाव	4
3.	राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के उद्देश्य	8
4.	सिद्धांत	10
5.	रणनीति और कार्रवाई	15
5.1	विनियामक सुधार	16
5.1.1	नीति व वैधानिक ढांचे की पुनः समीक्षा	16
5.1.2	प्रक्रिया संबंधी सुधार	17
5.1.3	स्थायी सुधार	18
	पर्यावरण एवं वन स्वीकृतियां	
	तटीय क्षेत्र	
	सजीव परिवर्तित सूक्ष्म जीव	
	पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील अंचल	
	अनुपालन की मानीटरी	
	पर्यावरण निर्णय-प्रक्रिया में आर्थिक सिद्धांतों का उपयोग	
5.2	पर्यावरणीय संसाधनों को बढ़ाना और उनका संरक्षण	22
5.2.1	भूमि अवक्रमण	22
5.2.2	मरुस्थल पारि-प्रणालियां	23
5.2.3	वन और वन्यजीव	24
	वन	
	वन्यजीव	
5.2.4	जैव-विविधता, पारंपरिक ज्ञान और प्राकृतिक धरोहर	27
5.2.5	अलवणीय जल संसाधन	28
	नदी प्रणालियां	
	भू-जल	
	नम-भूमियां	
5.2.6	पर्वतीय पारि-प्रणालियां	34
5.2.7	तटीय संसाधन	35

5.2.8	प्रदूषण उपशमन वायु प्रदूषण जल प्रदूषण मृदा प्रदूषण शोर प्रदूषण	35
5.2.9	मानव निर्मित धरोहर का संरक्षण	40
5.2.10	जलवायु परिवर्तन	40
5.3	पर्यावरणीय मानक आदि	42
5.3.1	पर्यावरणीय मानक	42
5.3.2	पर्यावरण प्रबंधन प्रणालियां, ईको लेबलिंग और प्रमाणीकरण	43
5.4	स्वच्छ प्रौद्योगिकियां और नवीनीकरण	45
5.5	पर्यावरणीय जागरूकता, शिक्षा और सूचना	46
5.6	सहभागिता और हितधारक (स्टेकहोल्डर) भागीदारी	47
5.7	क्षमता निर्माण	48
5.8	अनुसंधान और विकास	49
5.9	अंतर्राष्ट्रीय सहयोग	49
5.10	नीति की समीक्षा	50
5.11	कार्यान्वयन की समीक्षा	50
6.	इस नीति को तैयार करने की प्रक्रिया	51

आभार

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों, केंद्रीय मंत्रालयों, संसद सदस्यों, राज्य सरकारों, उद्योग संघों, शैक्षिक और अनुसंधान संस्थानों, सिविल समाज, गैर-सरकारी संगठनों और जनता के साथ हुए व्यापक परामर्शों का परिणाम है । उन्होंने जिस गहरी रुचि और दिलचस्पी से इस नीति के पूर्ववर्ती प्रारूपों की समीक्षा की और इसके सुधार के लिए निविष्टियां और सुझाव (फीडबैक) प्रदान किया उसके लिए हम आभार व्यक्त करते हैं और धन्यवाद देते हैं । अनेक प्रकाशित शोध साहित्य की भी समीक्षा की गई । हम अनुक्रिया देनेवालों/समीक्षकों का व्यक्तिगत रूप से आभार व्यक्त करने अथवा साहित्य की विशिष्ट प्रशस्ति प्रदान करने में असमर्थ हैं । निस्संदेह, इनमें से कई इस दस्तावेज में अपने योगदान को देखेगें ।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006

राष्ट्रीय पर्यावरण[1] नीति

1 प्रस्तावना

हमारे जैसे बहुविध व प्रगतिशील समाज में आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा पर्यावरणीय क्षेत्रों से संबंधित अनेक चुनौतियां होती हैं। विकास से वंचित रहे लोगों की आजीविका की सुरक्षा, स्वास्थ्य संबंधी देखरेख, शिक्षा तथा उनके सशक्तीकरण जैसे उपायों द्वारा व्यापक स्तर पर फैली गरीबी को कम करने और लैंगिक असमानताओं को दूर करने की प्रमुख अनिवार्यता के मार्ग में ये सभी चुनौतियां भी अपने वृहद रूप में सामने आती हैं।

पर्यावरण प्रबंधन संबंधी वर्तमान राष्ट्रीय नीतियां राष्ट्रीय वन नीति, 1988, राष्ट्रीय संरक्षण कार्यनीति तथा पर्यावरण एवं विकास पर वक्तव्य, 1992 और प्रदूषण उपशमन संबंधी नीति वक्तव्य, 1992 में निहित हैं। कुछ सैक्टर नीतियों जैसे राष्ट्रीय कृषि नीति, 2000, राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 2000 और राष्ट्रीय जल नीति, 2002 ने भी पर्यावरण प्रबंधन के क्षेत्र में अपना योगदान किया है। इन सभी नीतियों के अंतर्गत संबंधित सैक्टरों के विशिष्ट संदर्भों में अविच्छिन्न विकास की आवश्यकता को मान्यता दी गई है तथा इस तरह के विकास कार्यों के संबंध में कार्यनीतियों को अंगीकार किया गया है। राष्ट्रीय पर्यावरण नीति का उद्देश्य मौजूदा जानकारी तथा संचित अनुभवों के आधार पर इसके कार्य क्षेत्र में वृद्धि करना तथा अभी भी जो कमियां हैं, उन्हें दूर करना है। यह नीति पूर्व की नीतियों को हटाने के बजाए उन्हें और पुख्ता करती है।

देश के समूचे राजनीतिक परिदृश्य में प्राकृतिक संसाधनों द्वारा अनेक पारिस्थितिकीय सेवाएं प्रदान करने के साथ-साथ आजीविका उपलब्ध कराने में निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका को भी पहचान मिली है।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति का उद्देश्य मौजूदा जानकारी तथा संचित अनुभवों के आधार पर इसके कार्य क्षेत्र में वृद्धि करना तथा अभी भी जो कमियां हैं, उन्हें दूर करना है। यह नीति पूर्व की नीतियों को हटाने के बजाए उन्हें और पुख्ता करती है।

1. *पर्यावरण में स्वयं से बाहर की प्राकृतिक तथा मानव निर्मित, दोनों ही हस्तियां शामिल हैं जो वर्तमान में या शायद भविष्य में मानवता को महत्व प्रदान करती हैं। पर्यावरणीय चिंता मानव क्रियाओं के माध्यम से उनके अवक्रमण के प्रति है।*

विभिन्न सेक्टोरल और क्रास सेक्टोरल पर्यावरणीय प्रबंधन के संबंध में साझे दृष्टिकोण के लिए एक व्यापक नीतिगत वक्तव्य तैयार करने की आवश्यकता कुछ समय से महसूस की जा रही है । जैसा कि हमारे सामने विकास संबंधी नई चुनौतियां आई हैं तथा विकास प्रक्रिया में पर्यावरणीय सरोकारों की केंद्रीय भूमिका के बारे में हमारी समझ बढ़ी है, इसलिए पूर्व के उद्देश्यों, नीतिगत लिखतों तथा कार्यनीतियों की पुनरीक्षा किए जाने की भी आवश्यकता है।

इस गत्यात्मकता के लिए एक विकासशील तथा लचीले नीतिगत ढांचे की आवश्यकता है जिसमें मानिटरिंग व पुनरीक्षा के साथ-साथ जहां कहीं आवश्यक हो, इसमें संशोधन करने के लिए एक अंतर्निहित प्रणाली हो । मानव कल्याण की वृद्धि के संदर्भ में अविच्छिन्न विकास संबंधी सरोकारों की मोटे तौर पर जिन अर्थों में संकल्पना की गई है, उन्हें भारतीय विकास दर्शन के एक विषय के रूप में बार-बार प्रयोग किया जाता रहा है । आज के समय में तीन बुनियादी आकांक्षाओं के संबंध में आम राय है: प्रथमतया ,सभी मानव उत्तम कोटि का जीवन जीने के योग्य बनें, दूसरा यह कि सभी लोग जैवमंडल की परिमितता का सम्मान करने में सक्षम बनें तथा तीसरा यह कि न तो अच्छे जीवन की अभिलाषा और न ही जैव भौतिक सीमाओं को मान्यता विश्व में बेहतर न्याय की तलाश के आड़े आए ।

मानव कल्याण की वृद्धि के संदर्भ में अविच्छिन्न विकास संबंधी सरोकारों की मोटे तौर पर जिन अर्थों में संकल्पना की गई है, उन्हें भारतीय विकास दर्शन के एक विषय के रूप में बार-बार प्रयोग किया जाता रहा है ।

इसके लिए देश की आर्थिक, सामाजिक तथा पर्यावरणीय आवश्यकताओं के मध्य संतुलन तथा सामंजस्य की आवश्यकता है[2]। पर्यावरण संबंधी कई महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय पहलों में भारत भी उल्लेखनीय भूमिका अदा करता है । वह प्रमुख बहुपक्षीय समझौतों में एक पक्षकार है तथा अनेक पर्यावरणीय समस्याओं की परस्पर अंतर-संबद्धताओं और सीमापारीय विशेषता को मान्यता प्रदान करता है । राष्ट्रीय पर्यावरण नीति को अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों में सकारात्मक योगदान देने के प्रति भारत की वचनबद्धता संबंधी एक वक्तव्य बनाए जाने की भी मंशा है ।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति संविधान के अनुच्छेद 48क तथा 51क (छ) में अधिदेशित तथा अनुच्छेद 21 की न्यायिक विवेचना द्वारा पुष्ट की गई स्वच्छ पर्यावरण के प्रति हमारी राष्ट्रीय वचनबद्धता संबंधी प्रतिक्रिया है । यह स्वीकार किया गया है कि स्वस्थ पर्यावरण बनाए रखना केवल सरकार की ही जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि प्रत्येक नागरिक की भी जिम्मेदारी है । अतः देश भर में पर्यावरण प्रबंधन के क्षेत्र में एक सहभागिता की भावना महसूस की जानी चाहिए। हालांकि सरकार को अपने प्रयत्नों को बढ़ावा देना चाहिए, लेकिन इसके साथ-साथ प्रत्येक व्यक्ति को - प्राकृतिक और सांस्थानिक, पर्यावरणीय गुणवत्ता को बनाए रखने तथा उसमें बढ़ोत्तरी के प्रति अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार करना चाहिए ।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति ... का उद्देश्य सभी विकासात्मक गतिविधियों में पर्यावरणीय विषयों को मुख्य धारा में शामिल करना है ।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति उपर्युक्त विचारों/तथ्यों से अभिप्रेरित है तथा इसका उद्देश्य सभी विकासात्मक गतिविधियों में पर्यावरणीय विषयों को मुख्य धारा में शामिल करना है । इसमें देश के समक्ष मौजूदा तथा भविष्य में आने वाली प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियों, पर्यावरण नीति के उद्देश्यों, नीतिगत कार्रवाई को रेखांकित करते मानक सिद्धांतों, हस्तक्षेप संबंधी कार्यनीतिक थीमों, कार्यनीतिक थीमों को पूरा करने के लिए जरूरी वैधानिक व संस्थागत विकास के सामान्य संकेतों तथा कार्यान्वयन और समीक्षा संबंधी कार्य तंत्रों आदि का संक्षेप में उल्लेख किया गया है । इसे विशेषज्ञों तथा विविध स्टेकहोल्डरों के साथ विस्तारपूर्वक परामर्श करके तैयार किया गया है और इस प्रक्रिया का प्रलेखन भी किया गया है ।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति को नियामक सुधारों, पर्यावरणीय संरक्षण से संबंधित कार्यक्रमों तथा परियोजनाओं, और केंद्र, राज्य एवं स्थानीय सरकारों की एजेंसियों द्वारा कानून बनाने तथा उसकी

2. *पंचवर्षीय योजना 2002-2007, खंड-2, अध्याय-1, योजना आयोग, भारत सरकार*

पुनरीक्षा करने के कार्य में एक निर्देशिका के रूप में बनाए जाने की मंशा है । इस नीति का प्रमुख थीम यह है कि यद्यपि पर्यावरणीय संसाधनों का संरक्षण करना सभी की आजीविका की सुरक्षा तथा बेहतरी के लिए आवश्यक है, तथापि संरक्षण के लिए सबसे सुरक्षित आधार यह सुनिश्चित करना है कि लोग उन संसाधनों के अवक्रमण की बजाय उनके संरक्षण द्वारा अपनी बेहतर आजीविका प्राप्त कर सकें । इस नीति का उ÷श्य विभिन्न स्टेकहोल्डरों अर्थात : सार्वजनिक एजेंसियों, स्थानीय समुदायों, शैक्षणिक और वैज्ञानिक संस्थानों, निवेशक समुदाय, तथा अंतर्राष्ट्रीय विकास भागीदारों के मध्य पर्यावरणीय प्रबंधन के लिए उनके अपने-अपने संसाधनों और क्षमताओं के नियंत्रण व उपयोग के मामले में सहभागिता विकसित करना भी है ।

इस नीति का प्रमुख थीम यह है कि यद्यपि पर्यावरणीय संसाधनों का संरक्षण सभी की आजीविका की सुरक्षा तथा बेहतरी के लिए आवश्यक है, तथापि संरक्षण के लिए सबसे सुरक्षित आधार यह है सुनिश्चित करना है कि वे उन संसाधनों के अवक्रमण की बजाय उनके संरक्षण द्वारा अपनी बेहतर आजीविका प्राप्त कर सकें ।

2 मुख्य पर्यावरणीय चुनौतियां : कारण एवं प्रभाव

देश के समक्ष जो प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियां हैं वे पर्यावरणीय अवक्रमण तथा विभिन्न आयामों में मौजूद गरीबी तथा आर्थिक प्रगति के गठजोड़ से संबंधित हैं । ये चुनौतियां आंतरिक तौर पर पर्यावरणीय स्रोतों जैसे कि भूमि, जल, वायु तथा उनकी वनस्पतिजात और प्राणिजात की स्थिति से जुड़ी हुई हैं । पर्यावरण अवक्रमण के आसन्न कारकों में जनसंख्या वृद्धि, अनुपयुक्त प्रौद्योगिकी एवं उपभोग संबंधी विकल्प का चयन तथा गरीबी जिससे लोगों और पारिप्रणालियों के बीच के संबंध प्रभावित होते हैं, के साथ-साथ विकास गतिविधियों जैसे गहन कृषि, प्रदूषक उद्योग तथा अनियोजित शहरीकरण आदि शामिल हैं । तथापि, ये कारक केवल गंभीर कारण संबंधों के माध्यम से पर्यावरणीय अवक्रमण, विशेषकर संस्थागत विफलताओं को जन्म देते हैं जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरणीय स्रोतों की प्राप्ति और उनके प्रयोग संबंधी अधिकारों के प्रवर्तन संबंधी पारदर्शिता में कमी आने के साथ-साथ पर्यावरणीय संरक्षण को हतोत्साहित करने वाली नीतियां, (और जिनका उद्गम राजस्व व्यवस्था में हो सकता है) बाजार असफलता (जिसे विनियामक कार्य क्षेत्रों में कमियों के साथ जोड़ा जा सकता है) तथा संचालन संबंधी बाधाएं पैदा हो सकती हैं ।

पर्यावरणीय अवक्रमण विशेषकर निर्धन ग्रामीणों में गरीबी को बढ़ावा देने वाला, एक प्रमुख कारक हैं । इस प्रकार का अवक्रमण मृदा की उपजाऊ शक्ति, स्वच्छ जल की मात्रा और गुणवत्ता, वायु गुणवत्ता, वनों, वन्यजीवन तथा मत्स्य पालन को प्रभावित करता है ।

पर्यावरणीय अवक्रमण विशेषकर निर्धन ग्रामीणों में गरीबी को बढ़ावा देने वाला, एक प्रमुख कारक है । इस प्रकार का अवक्रमण मृदा की उपजाऊ शक्ति, स्वच्छ जल की मात्रा और गुणवत्ता, वायु गुणवत्ता, वनों, वन्यजीवन तथा मत्स्य पालन को प्रभावित करता है । प्राकृतिक संसाधनों, विशेषकर जैव विविधता पर ग्रामीण निर्धनों, मुख्यतया आदिवासी समाज की निर्भरता स्वतः सिद्ध है । विशेष रूप से महिलाओं पर प्राकृतिक संसाधनों के अवक्रमण का बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है , क्योंकि वह इन संसाधनों को एकत्र करने और इनके उपयोग के लिए तो सीधे रूप से उत्तरदायी हैं, लेकिन इनके प्रबंधन में उनका उत्तरदायित्व नगण्य है । ग्रामीण महिलाओं द्वारा इन संसाधनों को एकत्र करने में लगाए गए समय और

श्रम के कारण उनके द्वारा अपने बच्चों के पालन-पोषण, उनकी शिक्षा-व्यवस्था, अपनी आय बढ़ाने के कौशल में वृद्धि करने अथवा लाभकारी आजीविका के अवसरों में हिस्सा लेने के लिए समय दे पाने की उनकी कार्यक्षमता पर सीधा असर पड़ता है।

पारिप्रणालियों की क्षमता के नुकसान से गरीब लोग ज्यादा प्रभावित होते हैं। क्षमताओं में अधिक कमी से परि प्रणालियां[3], जो आजीविका का आधार हैं, कमजोर हो सकती हैं, जिसकी वजह से परेशानी पैदा हो सकती है। पर्यावरणीय स्रोतों के आधार में गिरावट के परिणामस्वरूप, यहां तक कि अर्थव्यवस्था की स्थिति बेहतर दिखाई देने के बावजूद भी, कतिपय जन समूह निराश्रय हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, अपशिष्ट शोधन तथा स्वच्छता में कमी, उद्योग तथा यातायात जनित प्रदूषण के कारण शहरी पर्यावरण के अवक्रमण से वायु, जल एवं मृदा की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने के साथ-साथ विभिन्न तरीकों से शहरी निर्धनों के स्वास्थ्य पर भी असर पड़ता है। इसके परिणामस्वरूप उनकी रोजगार ढूंढने, उसे बनाए रखने तथा स्कूल जाने की क्षमता प्रभावित होती हैं तथा लिंग असमानताओं[4] को बढ़ावा मिलता है। इन सभी कारणों से गरीबी की स्थिति बनी रहती है।

पर्यावरणीय स्रोतों के आधार में गिरावट के परिणामस्वरूप, यहां तक कि अर्थव्यवस्था की स्थिति बेहतर दिखाई देने के बावजूद भी, कतिपय जन समूह निराश्रय हो सकते हैं।

यदि संस्थागत[5] विफलताएं निरंतर बनी रहें तो गरीबी स्वयं पर्यावरणीय अवक्रमण को बढ़ावा दे सकती है। गरीब व्यक्तियों के लिए अनेक पर्यावरणीय संसाधन उत्पादन तथा उपभोग के मामले में अन्य वस्तुओं (जैसे कृषि उत्पादनों के मामले में जल, खाद्य पदार्थों के उपभोग के मामले में ईंधन लकड़ी) के पूरक हैं, जबकि कई पर्यावरणीय संसाधन आय अथवा खाद्य पदार्थों (जैसे मत्स्यन, गैर-काष्ठ वनोत्पाद) के स्रोत हैं। यह अकसर एकत्रित कारणों का एक स्रोत है इससे बार-बार नए कारण संचित होते रहते हैं, जहां गरीबी, लिंग असमानताएं तथा पर्यावरणीय अवक्रमण परस्पर एक दूसरे को बल प्रदान करते हैं। गरीबी तथा पर्यावरणीय अवक्रमण को जनसंख्या वृद्धि के कारण भी बल मिलता है जो कि बदले में विविध कारण कारकों की जटिल अन्योन्यक्रिया तथा विकास अवस्थाओं पर निर्भर करती है। जनसंख्या वृद्धि के सामाजिक व आर्थिक संदर्भ का उल्लेख राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 2000 में स्पष्ट रूप से किया गया है, जिसमें इस बात को स्वीकार किया गया है कि सतत विकास के लिए जनसंख्या स्थिरीकरण एक अनिवार्य शर्त है।

इसके बदले में आर्थिक प्रगति तथा पर्यावरणीय अवक्रमण के बीच एक द्विभाजक संबंध रहता है। एक ओर यह प्रगति प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के कारण अत्यधिक पर्यावरणीय अवक्रमण को जन्म दे सकती है तथा संस्थागत असफलताओं द्वारा होने वाले प्रदूषण उत्सर्जन की स्थिति को और खराब कर सकती है। यदि पर्यावरणीय स्रोत -आधार पर पड़ने वाले प्रभावों की अनदेखी की जाती है तो इससे राष्ट्रीय आय से संबंधित परंपरागत वित्तीय अनुमानों से गलत जानकारी प्राप्त होती है। दूसरी ओर आर्थिक प्रगति द्वारा

---

3. 'लचकदार' 'पारिप्रणालियों की मानव निर्मित या प्राकृतिक हानि तथा अप्रत्याशितता से उबरने की क्षमता है। यदि किसी प्रणाली की लोच समाप्त हो जाती है तो यह किसी अस्थाई अस्तव्यस्तता की वजह से भी शीघ्रता से एक पूर्णतः विभिन्न प्रकार की स्थिति (और प्रतिकूल) में परिवर्तित हो सकती है।

4. उदाहरण के तौर पर जिस प्रकार घरों में वेतन-भोगी पुरुषों के उपचार के लिए अधिमान्य तौर पर चिकित्सा के लिए धन आबंटित किया जाता है।

5. जो औपचारिक संस्थानों, जैसे कि संसाधनों के ऊपर कानूनी अधिकार तथा पारंपरिक अनौपचारिक संस्थानों, जैसे कि संसाधन प्रबंधन के लिए सामुदायिक मानदंड, दोनों से ही संबंधित हो।

पर्यावरणीय निवेशों के लिए आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराकर, उन्नत पर्यावरणीय आचरण के लिए सामाजिक दबाव बनाकर और संस्थागत व नीतिगत परिवर्तन लाकर पर्यावरणीय गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है । विशेषकर औद्योगिक देशों में उपभोग संबंधी असतत पैटर्नों के कारण भी स्थानीय तथा भौगौलिक दोनों स्तरों पर पर्यावरण पर गंभीर दुष्प्रभाव पड़ा है । भौगोलिक प्रभाव विकासशील देशों में स्पष्ट रूप से देखने को मिलते हैं जो कि गरीबी को और बढ़ा रहे हैं ।

यह बात निरंतर स्पष्ट होती जा रही है कि पर्यावरण की खराब गुणवत्ता ने मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है ।

यह बात निरंतर स्पष्ट होती जा रही है कि पर्यावरण की खराब गुणवत्ता ने मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है । ऐसा अनुमान है कि भारत में कुछ मामलों में लगभग 20 % बीमारियों के लिए पर्यावरणीय कारक जिम्मेदार हैं तथा अनेक पर्यावरण-स्वास्थ्य कारक गरीबी के विभिन्न आयामों (अर्थात कुपोषण, स्वच्छ ऊर्जा एवं जल की अनुपलब्धता) के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं । यह दर्शाया गया है कि भीतरी वायु प्रदूषण को कम करना, सुरक्षित पेयजल के स्रोतों की सुरक्षा, मृदा को संदूषित होने से बचाना, उन्नत सफाई उपाय और बेहतर जन स्वास्थ्य प्रणाली जैसे हस्तक्षेपों की सहायता से स्वास्थ्य संबंधी कई गंभीर समस्याओं की घटनाओं को कम करने के प्रभावी अवसर प्राप्त हो सकते हैं । यह भी स्पष्ट हो चुका है कि सार्वजनिक और निजी व्यवहार से संबंधित बेहतर पद्धतियों के संबंध में व्यापक जागरूकता फैलाए व शिक्षा दिए बिना पर्यावरण सुरक्षा संबंधी इन उपायों से अपेक्षित परिणाम प्राप्त करना कठिन होगा ।

पर्यावरणीय संसाधनों तथा उनके प्राप्ति प्रयोग के मामले में अस्पष्ट या अपर्याप्त रूप से प्रवर्तित किए गए अधिकारों के संबंध में संस्थागत विफलता के परिणामस्वरूप पर्यावरणीय अवक्रमण होता है।

पर्यावरणीय संसाधनों तथा उनके प्राप्ति प्रयोग के मामले में अस्पष्ट या अपर्याप्त रूप से प्रवर्तित किए गए अधिकारों के संबंध में संस्थागत विफलता के परिणामस्वरूप पर्यावरणीय अवक्रमण होता है, क्योंकि तीसरे पक्षकार ही मुख्य रूप से इस तरह के अवक्रमण का अनुभव करते हैं और इस क्षति के लिए उत्तरदायी व्यक्तियों को कोई कीमत नहीं चुकानी पड़ती । सामुदायिक तथा वैयक्तिक, दोनों स्तरों के इस तरह के अधिकार - महत्वपूर्ण संस्थाएं हैं˙ जो मानवों तथा पर्यावरण के प्रयोग के संबंधों में मध्यस्थता का कार्य करते हैं । पारंपरिक तौर पर गांवों में साझे जल के स्रोतों, चराई भूमियों, स्थानीय वनों तथा मत्स्य उद्योग आदि को स्थानीय समुदायों द्वारा विभिन्न मानदंडों जिसमें गैर-अनुमत आचरण के लिए शास्तियां भी शामिल हैं, के माध्यम से शोषण के प्रति सुरक्षा प्रदान की गई है । तथापि, विकास

प्रक्रिया, शहरीकरण तथा मृत्यु दर में तेजी से आई गिरावट के परिणामस्वरूप जनसंख्या में बढ़ोत्तरी सरकारी कार्रवाइयों, के कारण व्यक्तिगत अधिकारों के सामुदायिक अधिकारों से अधिक सुदृढ़ होने के हालात बनने और ऐसा होने पर बाजार ताकतों को इस तरह के परिवर्तनों के लिए दबाव की अनुमति मिलने जिनसे प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभाव पड़ने की संभावना होने से भी इन मानकों के स्तर में गिरावट आ सकती है । यदि कमजोर मानदंडों की वजह से सामुदायिक संसाधनों तक इस प्रकार का दखल जारी रहा तो इससे संसाधनों का अवक्रमण होने के साथ-साथ समुदाय की आजीविका भी प्रभावित होगी ।

नीति की विफलता विभिन्न स्रोतों, जिनमें राजकोषीय साधनों का प्रयोग जैसे कि प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक प्रयोग को प्रोत्साहन प्रदान करने वाले विभिन्न संसाधनों के प्रयोग हेतु बाह्य तथा आंतरिक आर्थिक रियायतें आदि शामिल हैं, से हो सकती है । अनुचित नीति साझे तौर पर प्रबंधन की गई प्रणालियों में परिवर्तन का कारण बन सकती है जिसके पर्यावरणीय परिणाम प्रतिकूल हो सकते हैं ।

नीति की विफलता विभिन्न स्रोतों, जिनमें राजकोषीय साधनों का प्रयोग...शामिल हैं, से हो सकती है।

अन्य प्रमुख चुनौतियां उभरते भूमंडलीय पर्यावरणीय सरोकारों जैसे जलवायु परिवर्तन, समताप मंडलीय ओजोन ह्रास तथा जैव-विविधता की हानि से उत्पन्न होती हैं । इसका हल इन समस्याओं के संबंध में देशों के साझे लेकिन अलग-अलग उत्तरदायित्व के सिद्धांत को प्रचालन में लाने से हो सकता है । इन भूमंडलीय पर्यावरणीय मुद्दों की अनुक्रिया में बहुपक्षीय शासन पद्धतियों तथा कार्यक्रमों से विकासशील देशों के विकास के अवसरों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए । इसके अतिरिक्त भूमंडलीय प्राकृतिक संसाधनों में हिस्सेदारी आवश्यक रूप से सभी देशों में समान प्रति आय की हिस्सेदारी आधार पर होनी चाहिए ।

3 राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के उद्देश्य :

इस नीति के मुख्य उद्देश्यों का विवरण नीचे दिया गया है । ये उद्देश्य प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियों की वर्तमान अवधारणाओं से संबंधित हैं । तदनुसार ये समय के साथ क्रमिक रूप से निर्धारित किए जा सकते हैं:

(i) **महत्वपूर्ण पर्यावरणीय संसाधनों का संरक्षण :**
उन महत्वपूर्ण पारिस्थितिकीय प्रणालियों, संसाधनों तथा प्राकृतिक व मानव निर्मित मूल्यवान धरोहरों की सुरक्षा तथा संरक्षण करना जो जीवन रक्षक आजीविका / आर्थिक तथा मानव कल्याण की व्यापक संकल्पना के लिए अनिवार्य हैं ।

(ii) **वर्तमान पीढ़ी में समता : गरीबों के लिए आजीविका सुरक्षा :**
समाज के सभी तबकों के लिए पर्यावरणीय संसाधनों तक पहुंच तथा गुणवत्ता की समानता सुनिश्चित करना तथा विशेष तौर पर यह सुनिश्चित करना कि निर्धन समुदाय जो आजीविका के लिए सर्वाधिक रूप से पर्यावरणीय संसाधनों पर निर्भर हैं, उन्हें ये संसाधन अवश्य मिलें ।

(iii) **पीढ़ियों में समता :**
वर्तमान और भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं तथा अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए पर्यावरणीय संसाधनों का न्यायोचित प्रयोग सुनिश्चित करना।

(iv) **आर्थिक तथा सामाजिक विकास में पर्यावरणीय सरोकारों का एकीकरण :**
आर्थिक तथा सामाजिक विकास के उद्देश्य से पर्यावरणीय सरोकारों को योजनाओं, कार्यक्रमों तथा परियोजनाओं के रूप में एकीकृत करना ।

(v) पर्यावरणीय संसाधनों के प्रयोग में दक्षता :

प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों के न्यूनीकरण के लिए आर्थिक उत्पादन की प्रति इकाई में प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग में कमी करके उनका सही प्रयोग सुनिश्चित करना।

(vi) पर्यावरणीय संचालन :

पर्यावरणीय संसाधनों के प्रयोग के प्रबंधन तथा विनियमन के संबंध में बेहतर संचालन (पारदर्शिता, न्यायोचितता, जवाबदेही, समय तथा लागतों में कमी, सहभागिता तथा नियंत्रण की स्वतंत्रता) के सिद्धांत को लागू करना।

(vii) पर्यावरण संरक्षण के लिए संसाधनों में बढ़ोतरी :

स्थानीय समुदायों, सार्वजनिक एजेंसियों, शैक्षणिक और अनुसंधान समुदाय, निवेशकों और बहुपक्षीय और द्वि-पक्षीय विकास पार्टनरों के मध्य परस्पर लाभकारी बहु हितधारक सहभागिताओं के माध्यम से पर्यावरणीय संरक्षण हेतु वित्त, प्रौद्योगिकी, प्रबंधन कौशल, पारंपरिक ज्ञान तथा सामाजिक पूंजी आदि को शामिल करते हुए अधिक संसाधन प्राप्ति सुनिश्चित करना।

4 सिद्धांत

यह नीति इस तथ्य को पहचान कर तैयार की गई है कि केवल वही विकास अविच्छिन्न हो सकता है जिसमें पारिस्थितिकीय दबावों और न्याय की अनिवार्यताओं पर भी ध्यान दिया गया हों । उपरोक्त उद्देश्यों को केंद्र, राज्य तथा स्थानीय सरकार के स्तरों पर विभिन्न सार्वजनिक प्राधिकरणों के विभिन्न कुशल कार्यनीति हस्तक्षेपों द्वारा प्राप्त किया जाना है । ये उद्देश्य विभिन्न साझेदारियों के भी आधार रूप होंगे । उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वैधानिक व्यवस्था और कानूनी सिद्धांत विकसित करने के अलावा, इन कार्यनीतिक हस्तक्षेपों का निर्धारण स्पष्ट रूप से उल्लिखित सिद्धांतों तथा उनके अनुप्रयोग की लागतों और तकनीकी और प्रशासनिक पहलुओं की तुलना में उनकी प्रासंगिकता और व्यवहार्यता के अनुसार आधारित होना चाहिए । तदनुसार, निम्नलिखित सिद्धांत नीति संबंधी विभिन्न कारकों की गतिविधियों में मार्गदर्शन कर सकते हैं। इनमें से प्रत्येक सिद्धांत में नीति उद्घोषणाओं, विधिशास्त्र, अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय कानून या अंतर्राष्ट्रीय सरकारी पद्धतियों में सुस्थापित वंश परंपरा विद्यमान है।

i **सभी मानव अविच्छिन विकास सरोकारों के केंद्र बिंदु हैं :**
सभी मानव अविच्छिन विकास सरोकारों के केंद्र बिंदु हैं । उन्हें प्रकृति के साथ तालमेल रखते हुए स्वस्थ और गतिशील जीवन जीने का हक है ।

ii **विकास का अधिकार :**
वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों की विकासात्मक तथा पर्यावरणीय आवश्यकताओं की समान रूप से पूर्ति के लिए विकास का अधिकार अवश्य ही दिया जाना चाहिए ।

iii **पर्यावरणीय सुरक्षा विकास प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है :**
अविच्छिन्न विकास के लिए पर्यावरणीय सुरक्षा विकास प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग होगी तथा इसे इससे अलग करके नहीं रखा जा सकता ।

iv एहतियाती दृष्टिकोण :

जहां प्रमुख पर्यावरणीय संसाधनों को गंभीर अथवा अपूरणीय क्षति के वास्तविक खतरे हों, वहां पर्यावरणीय अवक्रमण के निवारण के लिए लागत - प्रभावी उपायों के आस्थगन के लिए पूर्ण वैज्ञानिक सुनिश्चितता की कमी को कारण नहीं बनाया जाएगा।

v आर्थिक क्षमता

पर्यावरणीय संरक्षण से संबंधित विभिन्न सार्वजनिक कार्यों में आर्थिक क्षमता प्राप्त करने का प्रयास किया जाएगा[6]।

इस सिद्धांत के लिए आवश्यक है कि पर्यावरणीय संसाधनों की सेवाओं को आर्थिक महत्व प्रदान किया जाए तथा वैकल्पिक कार्य विधियों का विश्लेषण करते समय इसे अन्य वस्तुओं और सेवाओं के आर्थिक महत्व के बराबर महत्व दिया जाए।

इस सिद्धांत के अन्य प्रभाव निम्नलिखित हैं :-

क) " प्रदूषणकर्ता द्वारा क्षतिपूर्ति "[7] किसी एक पक्ष की उत्पादन तथा उपभोग संबंधी गतिविधियों का प्रभाव उन तीसरे पक्षों पर हो सकता है जिनका मूल गतिविधि के साथ प्रत्यक्ष तौर पर आर्थिक संबंध नहीं है । ऐसे प्रभाव को बहिर्भाविता कहते हैं। यदि बहिर्भाविता की लागतों (या लाभों) का दायित्व मूल क्रिया के लिए उत्तरदायी पक्ष पर नहीं पड़ता तो उत्पादन अथवा उपभोग तथा बहिर्भाविता के संपूर्ण क्रम का परिणामी स्तर अपर्याप्त होगा । इस प्रकार की स्थिति में बहिर्भाविता के दोषी को इसकी लागत (या लाभ) के वहन के लिए उत्तरदायी बनाकर आर्थिक क्षमता को पुनः बहाल किया जाना चाहिए । तदनुसार इस नीति के अंतर्गत प्रोत्साहन आधारित नीतिगत साधनों का उपयोग करते हुए पर्यावरणीय लागतों के आंतरिकीकरण को बढ़ावा दिया जाएगा जिसमें इस विचार को ध्यान में रखा जाएगा कि प्रदूषणकर्ता सार्वजनिक हितों का पूरा ध्यान रखते हुए तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और निवेश के स्वरूप को बिगाड़े बिना सिद्धांत तौर पर प्रदूषण की लागत को स्वयं वहन करेगा।

यदि बहिर्भाविता की लागतों (या लाभों) का दायित्व मूल क्रिया के लिए उत्तरदायी पक्ष पर नहीं पड़ता तो उत्पादन अथवा उपभोग तथा बहिर्भाविता के संपूर्ण क्रम का परिणामी स्तर अपर्याप्त होगा।

ख) लागत न्यूनीकरण : जहां कहीं किसी प्रक्रिया के पर्यावरणीय लाभों को विधियों या अवधारणात्मक कारणों की वजह से आर्थिक मूल्य के लिए आरोपित नहीं किया जा सकता हो, वहां (जैसे कि "अतुलनीय हस्तियां'' के मामले में (नीचे देखें)) किसी भी मामले में लाभ प्राप्त करने की आर्थिक लागतें कम की जानी चाहिए।

---

6. आर्थिक दक्षता से तात्पर्य समाज के सभी सदस्यों के कल्याण को अधिकाधिक स्तर तक ले जाना है जिसमें मानव, प्राकृतिक तथा मानव-निर्मित संसाधन तथा इसकी प्रौद्योगिकीयों और इसके सदस्यों की तरजीह शामिल हैं। समाज के प्रत्येक सदस्य द्वारा एक साझा वित्तीय पद्धति के आधार पर उसकी व्यक्तिपरक धारणाओं के अनुसार अर्जित किए गए कुल शुद्ध मूल्य को कल्याण माना जाएगा।

7. प्रदूषक वह है जिसके कार्य के परिणामस्वरूप तीसरे पक्षकारों पर प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न होता है।

संसाधन उपयोग में दक्षता ऐसे नीतिगत साधनों का प्रयोग करके भी हासिल की जा सकती है जो कि प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक उपयोग व उपभोग को न्यूनतम करने के लिए प्रोत्साहित करने वाले हों।

संसाधन उपयोग में दक्षता ऐसे नीतिगत साधनों का प्रयोग करके भी हासिल की जा सकती है जो कि प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक उपयोग व उपभोग को न्यूनतम करने के लिए प्रोत्साहित करने वाले हों। दक्षता का यह सिद्धांत लागतों और देरियों को न्यूनतम करने हेतु अपनाई जाने वाली प्रक्रियाओं और क्रियाविधियों को स्ट्रीमलाइन करते हुए पर्यावरणीय संचालन से जुड़े मामलों पर भी लागू होता है।

vi अतुल्य[8] महत्व की हस्तियां:

कतिपय अन्य बेजोड़ प्राकृतिक व मानव निर्मित हस्तियों के अलावा, मानव-स्वास्थ्य, जीवन तथा पर्यावरण की दृष्टि से जीवन रक्षक प्रणालियों को होने वाले जोखिमों को, जो कि बड़ी संख्या में व्यक्तियों के जीवन को प्रभावित कर सकते हैं, अतुल्य माना जा सकता है, वह इस अर्थ में कि कोई व्यक्ति अथवा समाज इन जोखिमों को किसी तरह के धन अथवा परंपरागत वस्तुओं और सेवाओं के बदले में स्वीकार नहीं करेगा। तदनुसार एक परंपरागत लागत-लाभ का संगणन इनके मामलों में लागू नहीं होगा और ऐसी एंटिटीज को उनके संरक्षण के लिए सामाजिक संसाधनों के आवंटन में प्रत्यक्ष अथवा तात्कालिक आर्थिक लाभों पर विचार किए बिना प्राथमिकता दी जाएगी[9]।

vii समता :

समता अथवा न्याय के मुख्य सिद्धांत में यह अपेक्षा की गई है कि मानवों के बीच के असंगत मतभेदों के आधार पर उनके साथ अलग-अलग तरह से व्यवहार नहीं किया जा सकता है। समानता संबंधी मानकों में अंतर संदर्भ अर्थात् 'हकदारियों और बाध्यताओं के निर्धारण के लिए निष्पक्ष नियमों से संबंधित "प्रक्रियात्मक समता" और 'हकदारियों और बाध्यताओं के विभाजन के संदर्भों में निष्पक्ष परिणामों से संबंधित अंतिम परिणाम के मामले में "समता", के अनुसार होना चाहिए। इसके अतिरिक्त प्रत्येक संदर्भ विभेद समाजों के भीतर न्याय से संबंधित "पीढ़ीगत समता" के आधार पर और विशेष रूप से अभाव ग्रस्त लोगों की सहभागिता सुनिश्चित करते हुए तथा पीढ़ियों के बीच न्याय प्रक्रिया से संबंधित "पीढ़ीगत समता" के अनुसार होना चाहिए इस नीति के संदर्भ में समता का आशय हकदारियों से संबंधित तथा पर्यावरणीय संसाधनों के प्रयोग के संबंध में निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में संबंधित जनता की भागीदारी से है।

इस नीति के संदर्भ में समता का तात्पर्य संबंधित जन समुदाय को पर्यावरणीय संसाधनों के उपयोग तथा निर्णय प्रक्रिया में भाग लेने हेतु समान हकदारी देने से है।

viii वैधानिक उत्तरदायित्व:

मौजूदा पर्यावरणीय शिकायत निस्तारण तंत्र प्रमुख रूप से आपराधिक उत्तरदायिता सिद्धांतों पर आधारित है जो कि पूरी तरह प्रभावी साबित नहीं हुआ है और इसमें सुधार करने की आवश्यकता है।

पर्यावरणीय क्षति से संबंधित नागरिक उत्तरदायिता पर्यावरण की दृष्टि से हानिप्रद क्रियाकलापों को रोकेगी और पर्यावरण क्षति के शिकार लोगों की प्रतिपूर्ति करेगी। अवधारणात्मक रूप से विधिक उत्तरदायिता को "प्रदूषण करने वाला ही चुकाएगा भी " नीति के विधिक सिद्धांत जो कि आर्थिक कार्यक्षमता के सिद्धांत से लिया गया है, के एक प्रतिरूप के रूप में देखा जा सकता है।

विधिक उत्तरदायिता को "प्रदूषण करनेवाला ही चुकाएगा भी " नीति के विधिक सिद्धांत जो कि आर्थिक कार्यक्षमता के सिद्धांत से लिया गया है, के एक प्रतिरूप के रूप में देखा जा सकता है।

---

8. संबंधित शैक्षिक साहित्य में ''अतुलनीय महत्व'' नाम दिया गया है।

9. ''अतुलनीय अस्तित्व'' के उदाहरण अनूठे ऐतिहासिक स्मारक हैं जैसे कि ताजमहल, करिश्माई प्रजातियां जैसे बाघ, या अनूठी स्थलाकृतियां जैसे फूलों की घाटी।

नागरिक उत्तरदायिता के स्थान पर निम्नलिखित वैकल्पिक दृष्टिकोण लागू हो सकते हैं :-

(क) दोष आधारित उत्तरदायिता

दोष आधारित उत्तरदायिता व्यवस्था में यदि कोई पक्ष पूर्व निर्धारित किसी कानूनी कर्त्तव्य का उल्लंघन करता है तो उसे इसके लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है। उदाहरण के लिए पर्यावरणीय मानक।

(ख) कठोर उत्तरदायिता

कठोर उत्तरदायिता के अंतर्गत, किन्हीं क्रियाकलापों अथवा कार्रवाई न कर पाने, जिसमें आवश्यक नहीं कि किसी कानून अथवा सुरक्षा कर्तव्य का उल्लंघन हुआ हो, के परिणामस्वरूप होने वाली क्षति से पीड़ित व्यक्ति को क्षतिपूर्ति करने की बाध्यता है।[10]

ix सार्वजनिक न्यास (पब्लिक ट्रस्ट) का सिद्धांत:

राज्य को सभी प्राकृतिक संसाधनों का पूर्ण स्वामित्व प्राप्त नहीं है बल्कि वह मात्र उन संसाधनों का एक ट्रस्टी है। ये संसाधन सार्वजनिक उपयोग और मनोरंजन के लिए हैं, लेकिन इनका उपयोग बड़ी संख्या में लोगों के न्यायसंगत हितों की रक्षा अथवा रणनीतिक राष्ट्रीय हितों के मामलों के लिए आवश्यक शर्तों को पूरा करने के अधीन है।

x विकेंद्रीकरण:

विकेंद्रीकरण के अंतर्गत केन्द्रीय प्राधिकरणों से राज्य और स्थानीय प्राधिकरणों को सत्ता का हस्तांतरण होता है, ताकि स्थानीय स्तर पर क्षेत्राधिकार संपन्न सार्वजनिक प्राधिकरणों को विशिष्ट पर्यावरणीय मामलों को देखने हेतु शक्तियां प्रदान की जा सकें।

xi एकीकरण

एकीकरण का आशय पर्यावरणीय मामलों को सैक्टोरल नीति निर्माण प्रक्रिया में शामिल करने सामाजिक और प्राकृतिक विज्ञान को पर्यावरण से जुड़े नीतिगत अनुसंधान कार्य के साथ जोड़ने तथा पर्यावरण नीतियों के क्रियान्वयन के लिए उत्तरदायी केंद्रीय, राज्य और स्थानीय स्वशासन स्तर की सरकारों की विभिन्न एजेंसियों के बीच संगत संबंधों को सुदृढ़ बनाने से है।

xii पर्यावरणीय मानकों का निर्धारण :

पर्यावरणीय मानक जहां लागू हों, वहां उन्हें आर्थिक और सामाजिक विकास की स्थिति को परिलक्षित करने में सक्षम होना चाहिए। किसी एक समाज या संदर्भ में अपनाए गए मानक आर्थिक और समाजिक रूप में अस्वीकार्य हो सकते हैं यदि उन्हें अन्य समाज या संदर्भ में विभेद किए बिना लागू किया जाए। पर्यावरणीय मानकों को निर्धारित करने में अनेक बातों पर ध्यान देना होगा, जैसे मानव स्वास्थ्य के लिए जोखिम, अन्य पर्यावरणीय हस्तियों को जोखिम, तकनीकी व्यवहार्यता, अनुपालन की लागत तथा रणनीतिक मामले आदि।

पर्यावरणीय मानक जहां लागू हों, वहां उन्हें आर्थिक और सामाजिक विकास की स्थिति को परिलक्षित करने में सक्षम होना चाहिए।

xiii निवारक कार्रवाई

अवक्रमित पर्यावरणीय संसाधनों को बहाल करने की कोशिश करने की अपेक्षा सबसे पहले पर्यावरणीय नुकसान की घटनाओं को होने से रोकना अधिक महत्वपूर्ण है।

अवक्रमित पर्यावरणीय संसाधनों को बहाल करने की कोशिश करने की अपेक्षा सबसे पहले पर्यावरणीय नुकसान की घटनाओं को होने से रोकना अधिक महत्वपूर्ण है।

xiv पर्यावरणीय प्रतिकार:

संकटापन्न अथवा खतरे में पड़ी प्रजातियों और प्राकृतिक प्रणालियों जो कि जीवन को सतत बनाए रखने, आजीविका प्रदान करने अथवा आम जनता की भलाई के लिए

10. श्री राम गैस रिसाव और भोपाल गैस रिसाव मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के संदर्भ में, जब जिम्मेदार पार्टी तीसरी पार्टी को हानि पहुंचाती है तो कठोर देयता लागू होती है।

विशेष महत्व रखती है, का बचाव करने के लिए सभी का साझा दायित्व है । यदि किसी हालात में ऐसे समुचित सार्वजनिक हित में कुछ विशिष्ट मामलों में संरक्षण नहीं प्रदान किया जा सके तो ऐसी परिस्थिति में ऐसे कार्यों के प्रस्तावकों द्वारा लागत प्रभावी प्रतिकारात्मक उपाय किए जाएं ताकि संबंधित लोगों के लिए खोई हुई, पर्यावरणीय सेवाएं यथाशीघ्र पुनः बहाल की जा सकें ।

5 रणनीति और कार्रवाई

पूर्वोक्त नीतिगत उद्देश्यों और सिद्धांतों से संबंधित वक्तव्य को प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियों से संबंधित विभिन्न क्षेत्रों में ठोस कार्रवाई करके मूर्तरुप दिया जाना है । ऐसे अनेक कार्य इस समय चल रहे हैं और अनेक वर्षों से चल रहे हैं और कुछ मामलों में ये कुछ दशकों से जारी हैं । सिद्धांतों और उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कुछ पहलुओं में नए थीमों का अनुसरण करने की आवश्यकता होगी । पहचाने गए विषयों पर संबंधित एजेंसियों द्वारा सरकार के सभी स्तरों-केंद्रीय, राज्य/संघ शासित प्रदेश और स्थानीय स्तर पर कार्य योजनाएं बनाई जानी चाहिए। विशेषकर राज्य और स्थानीय सरकारों को राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, के अनुरूप स्वयं की पर्यावरणीय नीतियां, कार्यनीतियां अथवा कार्य योजनाएं तैयार करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा । पंचायतों और शहरी स्थानीय निकायों, विशेषकर इनके कार्यों, कार्यपालकों, निधियों और समान क्षमताओं को सशक्त बनाने के लिए इस नीति के प्रमुख प्रावधानों को प्रचालित करने हेतु अधिक ध्यान देने की जरूरत है ।

पहचाने गए विषयों पर संबंधित एजेंसियों द्वारा सरकार के सभी स्तरों-केंद्रीय, राज्य/संघ शासित प्रदेश और स्थानीय स्तर पर कार्य योजनाएं बनाई जानी चाहिए।

पर्यावरणीय सरोकारों को सभी संगत विकास प्रक्रियाओं के साथ जोड़ना इस नीति का प्रमुख उद्देश्य है । इसके अलावा, पर्यावरणीय मामलों को सैक्टरल नीति निर्माण के साथ जोड़ने को भी इस नीति के महत्वपूर्ण सिद्धांत के रूप में मान्यता दी गई है । इनके प्रचालन के लिए सरकार के सभी स्तरों पर यथोचित कर्मठता सुनिश्चित करने हेतु एक तंत्र को संस्थागत बनाया जाएगा ।

प्रत्येक के मामले में निम्नलिखित कार्यनीतिक थीमों और कार्य की रूप रेखाओं को शामिल किया जाना, दोनों चालू गतिविधियों, कार्यकलापों और भूमिकाओं पर ध्यान केंद्रित करने के साथ-साथ आवश्यक नए कदम उठाना । तथापि यह आवश्यक नहीं कि ये दोनों प्रत्येक मामले में पूर्ण है ।

5.1 विनियामक सुधार

पर्यावरणीय संरक्षण के लिए विनियामक रेजीमों के अंतर्गत एक वैधानिक ढांचा और विनियामक संस्थाओं का एक समूह शामिल है। प्रत्येक में अपर्याप्तता होने के परिणामस्वरूप एक तरफ तेजी से पर्यावरणीय क्षय हुआ है और दूसरी तरफ विकास परियोजनाओं में ज्यादा देरी और कारोबारी कीमतों में वृद्धि हुई है। उस विधान के अलावा जो कि स्पष्ट रूप से पर्यावरण संरक्षण विषय से संबंधित है, अनेक सैक्टरल, क्रास सैक्टरल कानून तथा नीतियां और वित्तीय शासन पद्धतियां भी पर्यावरण की गुणवत्ता को प्रभावित करती हैं (इनमें से कुछ पर अगले खंडों में चर्चा की गई है)।

5.1.1 नीति व वैधानिक ढांचे की पुन: समीक्षा :

वर्तमान वैधानिक ढांचा व्यापक रूप से पर्यावरणीय सुरक्षा अधिनियम, 1986, जल (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) अधिनियम, 1974, जल उपकर अधिनियम, 1977 और वायु (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) अधिनियम, 1981 में निहित हैं। वनों और जैव विविधता प्रबंधन के संबंध में कानून, भारतीय वन अधिनियम, 1927 वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980, वन्यजीव (सुरक्षा) अधिनियम, 1972 और जैव विविधता अधिनियम, 2002 में वर्णित है। अन्य अनेक अधिनियमन भी हैं जो मूल भूत अधिनियमनों के उपबंधों को पूरा करते हैं।

निम्नलिखित विशिष्ट कार्रवाईयां की जाएंगी :-

(क) राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के अनुसार समीक्षा और परामर्श द्वारा संगत सैक्टोरल और क्रास सैक्टोरल नीतियों में पर्यावरणीय सरोकारों की स्पष्ट रूप से पहचान और उन्हें एकीकृत करते हुए पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के लिए एक बेहतर और एकीकृत अप्रोच संस्थागत करना।

(ख) बेहतर वैज्ञानिक सूझबूझ, आर्थिक और सामाजिक विकास और बहुपक्षीय पर्यावरणीय क्षेत्रों की वजह से नए विधानों के लिए उभरते क्षेत्रों की राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के अनुसार पहचान करना।

(ग) राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के अनुसार मौजूदा विधान प्रणाली की समीक्षा करना ताकि संबंधित कानूनों और विनियमों में सहक्रियाएं विकसित की जा सकें और जो पुरानी हो चुकी हैं उनको हटाया जा सके और समान उद्देश्यों के साथ प्रावधान शामिल किए जा सकें। राज्य सरकारों तथा स्वशासी संस्थाओं के स्तर पर विधान समीक्षा को आगे प्रोत्साहित करना ताकि उनका इस के साथ सामंजस्य बिठाया जा सके।

(घ) किसी भी तरह के अधिक क्षमता प्रतिकूल प्रभावों को कम करने और प्रचुरतया अनुकूल प्रभावों को बढ़ाने के लिए सैक्टर नीतियों और कार्यक्रमों के पर्यावरणीय मूल्यांकन की तकनीकें अंगीकृत करना व उन्हें संस्थागत बनाने के लिए कदम उठाना।

(ङ) सरकार (केंद्र,राज्य,स्थानीय) के संबंधित स्तरों पर उत्तरदायित्व को सुनिश्चित किया जाना और राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के उद्देश्यों को पूर्ण महत्व देते हुए, विशेषकर निर्धनों की आजीविका और कल्याण को सुनिश्चित करते हुए एक सुनिश्चित समय सीमा के भीतर एक वैधानिक परिवर्तन किया जाना तथा आवश्यक पर्यावरणीय संसाधनों पर उन्नत पहुंच को सुनिश्चित किया जाना।

5.1.2. प्रक्रिया संबंधी सुधार

(I) दृष्टिकोण :

सुधार, निवेश अनुमोदन और कार्यविधियों के क्रियान्वयन संबधी समिति (गोविंदराजन समिति) की सिफारिशों का, जिनमें पर्यावरण और वन संबंधी स्वीकृतियों में देरी को विकास परियोजनाओं में देरी का प्रमुख कारण बताया गया था, विभिन्न कानूनों और नियमों के तहत स्वीकृतियां और अन्य अनुमोदनों से संबंधित मौजूदा प्रक्रियाओं की समीक्षा हेतु अनुसरण किया जाएगा । इनमें पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम, वन संरक्षण अधिनियम, जल (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण अधिनियम), वायु (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) अधिनियम, वन्यजीव (सुरक्षा) अधिनियम और जीन अभियांत्रिकी अनुमोदन समिति नियम, पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम के तहत शामिल हैं । इसका उद्देश्य निर्णय करते समय देरी को कम करना पर्यावरणीय कार्यों का विकेंद्रीकरण करना और व्यापक पारदर्शिता और उत्तर दायित्व को सुनिश्चित करना है ।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगी :-

(क) अधिक पारदर्शिता के साथ तेजी से निर्णय लेना सुनिश्चित करने के लिए सूचना पहुंच (एक्सेस), सूचना प्रौद्योगिकी आधारित साधनों का प्रयोग, सभी कार्य योजनाओं के तहत, आवश्यक क्षमता-निर्माण सहित बढ़ाया जाएगा ।

(ख) अधिक विकेंद्रीकरण कार्यान्वित करने के लिए, राज्य स्तरीय एजेंसियों को पर्यावरणीय विनियमन और प्रबंधन के लिए अधिक उत्तरदायित्व दिया जाए। तथापि, इस प्रकार उनके सशक्तिकरण के साथ-साथ उनमें पारदर्शिता, जिम्मेदारी, वैज्ञानिक और प्रबंधकीय क्षमता तथा नियामक निर्णय लेने और प्रवर्तन कार्रवाई करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए । तदनुसार, इस आधार पर राज्यों को पर्यावरण सुरक्षा प्राधिकरणों की स्थापना के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।

(ग) विभिन्न क्षेत्रों में "अतुलनीय मूल्यों" की एन्टिटीज की पहचान करने के लिए कार्यतंत्र और प्रक्रियाएं स्थापित करना । यह सुनिश्चित किया जाएगा कि सभी विनियामक कार्यतंत्र सुशासन के सिद्धांतों का अनुसरण करने के लिए कानूनी तौर पर सशक्त हैं।

(ii) **कानूनी कार्रवाई के लिए ढांचा**

भारत में पर्यावरणीय दृष्टि से अस्वीकृत व्यवहार से निपटने के लिए वर्तमान दृष्टिकोण आपराधिक प्रक्रियाओं और दंड विधानों पर व्यापक रूप से आधारित है । यद्यपि, आपराधिक दंड यदि सफल हो, तो यह हानिकर प्रभाव पैदा कर सकता है और वास्तविक बात यह है कि अन्य कारणों से बहुत ही कम फलदायी है । दूसरी ओर प्रवर्तन प्राधिकरणों को अनियंत्रित शक्तियां देने से मालगुजारी प्राप्त करने की भावना पनप सकती है ।

सिविल कानून, दूसरी ओर लचीलापन प्रदान करता है और इसके दंड विधान तथा इन्हें विशेष परिस्थितियों के अनुसार प्रभावी रूप से शक्ल दी जा सकती है । नागरिक कार्रवाई का साक्ष्य संबंधी बोझ आपराधिक कानूनों की अपेक्षा कम हतोत्साहित करने वाले हैं । यह आदेशों और व्यादेशों के माध्यम से निषेधात्मक नियंत्रण को भी अनुमत करता है ।

तदनुसार, प्रवर्तन के लिए नागरिक और आपराधिक प्रक्रियाओं और दंड विधानों का एक न्यायोचित मिश्रित रूप कानूनी क्षेत्र में लागू किया जाएगा जो विद्यमान कानून की समीक्षा के माध्यम से होगा । नागरकि उपादेयता कानून, नागरकि दंड विधान और प्रक्रियाएं अननुपालन की अनेक प्रक्रियाओं को अधिशासित करेंगी । गंभीर किस्म के तथा पूर्णतया साबित किए जा सकने वाले और पर्यावरणीय कानूनों में आने वाली बाधाओं के लिए आपराधिक दंड विधान उपलब्ध रहेंगे और इनकी शुरुआत करने का कार्य जिम्मेदार प्राधिकारियों को दिया जाएगा । भारतीय दंड संहिता और आपराधिक प्रक्रिया संहिता के संबंधित उपबंधों का सहारा भी लिया जा सकता है । उल्लंघन की गंभीरता के अनुसार नागरिक और आपराधिक शास्तियों को क्रमांकित किया जाएगा।

प्रवर्तन के लिए नागरिक और आपराधिक प्रक्रियाओं और दंड विधानों का एक न्यायोचित मिश्रित रूप कानूनी क्षेत्र में लागू किया जाएगा जो विद्यमान कानून की समीक्षा के माध्यम से होगा ।

5.1.3 स्थायी सुधार :

(i) पर्यावरण एवं वन स्वीकृतियां -

नई परियोजनाओं का मूल्यांकन करने व उनकी समीक्षा के लिए पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन प्रमुख क्रियाविधि के तौर पर जारी रहेगा । मूल्यांकन प्रक्रियाएं गोविंदराजन समिति की सिफारिशों के अनुरूप प्रमुख संशोधनों के अंतर्गत हैं । नए प्रावधानों के अनुसार राज्य/संघ शासित स्तर पर शक्तियों का महत्वपूर्ण हस्तांतरण होगा । तथापि, इस तरह के हस्तांतरण को प्रभावी बनाने के लिए, मानव और स्थानिक क्षमताओं का साथ होना आवश्यक है। इसके अलावा, स्वीकृति पद्धतियों को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए निम्न कार्य किए जाएंगे :-

(क) केंद्र और राज्य के विनियामक प्राधिकरणों को प्रोत्साहन देना ताकि क्षेत्रीय और सामूहिक पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकनों को संस्थागत बनाया जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि पर्यावरण सरोकार नियोजन स्तर पर ही अभिज्ञात हो जाएं और उनका निराकरण हो सके ।

(ख) पर्यावरणीय मूल्यांकन प्रक्रिया के एक भाग के रूप में संबंधित परियोजनाओं की रासायनिक दुर्घटनाओं की संभाव्यता का विशिष्ट रूप से मूल्यांकन करना ।

(ग) ऐसी भूमियों की गुणवत्ता और उत्पादकता पर विशेष तौर पर विचार किया जाए, जिन्हें पर्यावरणीय मंजूरी प्रक्रिया के भाग के रूप में विकासात्मक कार्यों के लिए उपयोग किया जाना प्रस्तावित है । ऐसी परियोजनाएं जिनके लिए प्रमुख कृषि भूमि का बड़े पैमाने पर अपवर्तन किया जाना अपेक्षित हो, उनके संबंध में पर्यावरणीय स्वीकृति की आवश्यकता होगी ।

(घ) पर्यावरणीय प्रबंधन ढांचे को स्थापित करने और पर्यावरणीय अनुपालन की मानिटरी और उसे लागू करने की सुविधा की दृष्टि से उद्योगों और अन्य विकास गतिविधियों को जोड़ने के संबंध में प्रोत्साहित करना । सहभागिता प्रक्रियाओं के माध्यम से, सरकारी, औद्योगिक और पर्याप्त रूप से प्रभावित समुदाय को शामिल करते हुए पर्यावरणीय प्रबंधन परियोजनाओं की प्रयोजनोत्तर मानिटरी और कार्यान्वयन पर बल देना ।

(ड़) सघन प्राकृतिक वनों और आनुवांशिक संसाधनों के स्थानिक क्षेत्रों का गैर वानिकी प्रयोजनों के लिए वनों के अवक्रमण को और आगे नियमित करने की इजाजत नहीं दी जानी चाहिए । अपवर्तन को प्रतिबंधित करना, इसमें महत्वपूर्ण राष्ट्रीय हित के स्थल विशिष्ट मामलों की छूट होगी ।

(च) यह सुनिश्चित किया जाए कि वन अपवर्तन के सभी मामलों में परियोजना अथवा गतिविधि के लिए आवश्यक न्यूनतम वन क्षेत्र ही अपवर्तित हो । जब तक वास्तविक निर्माण कार्य शुरू न हो, अपवर्तित क्षेत्र को साफ न किया जाए ।

(छ) उद्योगों, विशेषकर खनन उद्योगों को बंद करने के पश्चात खनन योजनाओं से संबंधित सभी अनुमोदनों में पर्यावरण बहाली के लिए प्रावधान सुनिश्चित करना तथा ऐसी परियोजनाओं की बाद में की जाने वाली मानिटरी हेतु एक प्रणाली को संस्थागत बनाना ।

(ज) विनियमित गतिविधियों की विभिन्न श्रेणियों के पर्यावरणीय प्रबंधन के लिए ''उत्तम पद्धतियों'' की संहिता बनाना और उन्हें आवधिक रूप से समय-समय पर अद्यतन बनाना।

(ii) तटीय क्षेत्र:

तटीय क्षेत्रों में विकासात्मक गतिविधियां तटीय विनियमन क्षेत्र अधिसूचनाओं और उनके अंतर्गत बनाई गई एकीकृत तटीय क्षेत्र प्रबंधन योजनाओं द्वारा विनियमित की जाती हैं । तथापि, यह सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है कि विनियमों को वैज्ञानिक सिद्धांतों पर दृढ़ता से आधारित किया जाए जिसमें भौतिक, प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञानों को शामिल किया जाए । ऐसा इसलिए करना आवश्यक है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि बहुमूल्य तटीय पर्यावरणीय संसाधनों की प्रभावी सुरक्षा हो सके और इसमें आजीविका, अथवा मूल तटीय आर्थिक गतिविधि, अथवा सेटलमेंण्ट्स, अथवा अवसंरचना विकास पर अनावश्यक रूप से बाधा न पड़े । द्वीप उत्कृष्ट पारिप्रणालियां प्रस्तुत करते हैं और इनकी दशा में तटीय नियोजना और विनियमन के अंतर्गत निम्नलिखित विशेषताओं जैसे उनका

भूगर्भीय स्वरुप, सैंटलमैंट पैटर्न, द्वीप का ज्वालामुखीय अथवा प्रवालीय स्वरूप, वासस्थलों का आकार, उत्कृष्ट कल्चर्स, आजीविका पैटर्नों आदि पर विचार किया जाना चाहिए । विकास परियोजनाओं में विशेषकर पर्यटन, उच्चतर मूल्य कृषि, गहरे समुद्र में मछली शिकार, तेल और प्राकृतिक गैस आदि के संबंध में पर्याप्त पर्यावरणीय रक्षोपाय किए जाने चाहिए । ऐसा माना गया है कि राज्यों को एकीकृत तटीय क्षेत्र प्रबंधन योजनाएं तैयार करने के लिए तकनीकी और वित्तीय, दोनों प्रकार के संसाधनों की आवश्यकता होगी ।

निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगीः-

(क) तटीय पर्यावरणीय विनियम को और अधिक समग्र बनाने के लिए तटीय विनियम क्षेत्र अधिसूचनाओं पर पुनः दृष्टि डालना, ताकि इसके फलस्वरूप तटीय पारिस्थितिकीय प्रणालियों, तटीय समुद्री जल क्षेत्रों, और संभावित समुद्री स्तर के उफान वाले और कठोर प्राकृतिक घटनाओं और तटीय क्षेत्रों के बचाव को सुनिश्चित किया जा सके ।
एकीकृत तटीय क्षेत्र प्रबंधन योजनाओं को व्यापक बनाए जाने की जरूरत है, और इन्हें विशेषज्ञों द्वारा वैज्ञानिक आधार पर तैयार किया जाए, जिसमें स्थानीय समुदायों की इसकी तैयारी और कार्यान्वयन, दोनों में सहभागिता समाविष्ट की जाए । एकीकृत तटीय क्षेत्र प्रबंधन योजनाओं के पूर्व निर्धारित अंतरालों पर भूसंरचनात्मक, आर्थिक गतिविधियों और पुनर्वास पैटर्नों में परिवर्तनों और तटीय और समुद्री पर्यावरणीय स्थितियों को देखने के लिए समीक्षा की जाए ।

(ख) राज्य पर्यावरणीय प्राधिकरणों की विशिष्ट परियोजनाओं की स्वीकृति को यथासंभव विकेंद्रीकृत किया जाए । इनमें ऐसी गतिविधियों को छूट दी जा सकती है जो पर्यावरणीय दृष्टि से अधिक असर न डालती हों और एकीकृत तटीय क्षेत्र प्रबंधन के अनुरूप हो।

(iii) सजीव परिवर्तित सूक्ष्मजीव[11] (लिविंग मोडिफाइड आर्गेनिजम)

जैव प्रौद्योगिकी में आजीविका के संवर्धन और देश के आर्थिक विकास में योगदान करने की भारी क्षमता मौजूद है । दूसरी ओर सजीव परिवर्तित जीव पारिस्थितिकीय संसाधनों और संभवतः मानव और पशु स्वास्थ्य को महत्वपूर्ण खतरे पैदा कर सकते हैं । इस बात को सुनिश्चित करने के लिए कि जैव प्रौद्योगिकी के विकास से अदृश्य प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेंगे निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगीः-

(क) सजीव परिवर्तित जीवों के लिए विनियामक प्रक्रियाओं की समीक्षा करना ताकि समूची वैज्ञानिक जानकारी पर विचार किया जा सके और पारिस्थितिकीय, स्वास्थ्य, आर्थिक सरोकारों का पर्याप्त रूप से निराकरण किया जा सके ।

(ख) राष्ट्रीय जैव सुरक्षा दिशानिर्देशों और जैव सुरक्षा प्रचालनों की आवधिक समीक्षा करना ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि यह वर्तमान वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित हो ।

(ग) सजीव परिवर्तित जीवों की सीमापारीय आवाजाही से निपटने के समय जैव विविधता और मानव स्वास्थ्य की सुरक्षा इस ढंग से सुनिश्चित करना जो कि बहुपक्षीय जैव-सुरक्षा प्रोटोकोल के अनरूप हो ।

11. सामान्य तौर पर आनुवांशिक रूप से परिवर्तित जीवोंको संबंधित विनियामक प्रक्रियाओं के भाग के रूप में उनके संभावित लाभों और नुकसानों के मूल्यांकन की जरूरत है । सजीव परिवर्तित जीव के उपवर्ग में, तथापि, प्रत्युत्तर के लिए उनकी संभाव्यता के कारण पर्यावरणीय चिंताएं शामिल हैं ।

(iv) पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील अंचल

पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील अंचलों को ऐसे क्षेत्रों के रूप में परिभाषित किया जाए जिनमें अतुल्य महत्व वाले अभिज्ञात पर्यावरणीय संसाधन मौजूद हैं जिनके संरक्षण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

इन संसाधनों को संरक्षित और बढ़ाने की दृष्टि से और ऐसा करते समय इन क्षेत्रों के वास्तविक सामाजिक आर्थिक विकास में बाधा न डालते हुए निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगी :-

(क) देश में पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील ऐसे क्षेत्रों की पहचान करना और उन्हें कानूनी दर्जा देना जो अतुलनीय महत्व के साथ-साथ पर्यावरणीय रूप से अपना एक अलग स्थान रखते हैं और जिनके संरक्षण हेतु विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है।

(ख) इन क्षेत्रों के लिए वैज्ञानिक आधार पर क्षेत्र विकास योजनाएं बनाना जिनमें स्थानीय समुदायों की पर्याप्त सहभागिता हो।

(ग) ऐसे क्षेत्रों के पर्यावरणीय प्रबंधन हेतु स्थानीय संस्थाएं बनाना जिनमें स्थानीय लोगों की पर्याप्त सहभागिता हो, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि यह कार्य क्षेत्र विकास योजनाओं के अनुरूप हो सके, जिन्हें स्थानीय समुदायों के परामर्श से तैयार किया जाना चाहिए।

(v) अनुपालन की मानीटरी :

पर्यावरणीय अनुपालन धीमी गति से होने का एक कारण अपर्याप्त तकनीकी क्षमता, मानिटरी अवसंरचना और प्रवर्तन संस्थाओं में प्रशिक्षित स्टाफ उपलब्ध न होना है। इसके अलावा अनुपालन की मानीटरी करने में अत्यधिक प्रभावित स्थानीय समुदायों की पर्याप्त भागीदारी न होने के साथ-साथ मानीटरी संबंधी ढांचागत सुविधाओं को बढ़ाने में संस्थागत सार्वजनिक-निजी साझेदारी का भी अभाव रहता है।

निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगी :

(क) पंचायती राज संस्थाओं तथा शहरी स्थानीय निकायों को अनुपालन की मानीटरी का कार्य पर्यावरणीय प्रबंध योजनाओं के अनुरूप करने हेतु सक्षम बनाने के लिए उनकी क्षमता का विकास करने की पहल सहित अन्य कदम उठाना। नगरपालिकाओं को अपनी पर्यावरणीय रिपोर्टें वार्षिक रूप से उनके नियंत्रक निकायों को देने हेतु प्रोत्साहित करने के उपाय भी किए जाएंगे।

(ख) पर्यावरणीय अनुपालनों की मानिटरी के लिए ढांचा स्थापित करने और उसे चलाने में निजी क्षेत्र के वित्तीय, तकनीकी और प्रबंधकीय संसाधनों की लीवरेज के लिए सार्वजनिक - निजी क्षेत्र की सहभागिता के माडल विकसित करना तथा मानिटर की गई एन्टिटीज के साथ हितों के संभावित संघर्ष रोकने हेतु कड़े सुरक्षोपाय करना।

(vi) पर्यावरणीय निर्णय प्रक्रिया में आर्थिक सिद्धांतों का उपयोग

प्राकृतिक संसाधनों के अवक्रमण और विनाश से संबंधित लागतों को विभिन्न स्तरों पर आर्थिक कारकों के निर्णयों में शामिल किया जाए ताकि इस प्रवृत्ति को बदला जा सके कि ये संसाधन '' निःशुल्क वस्तुओं '' के रूप में इस्तेमाल किए जा सकते हैं और समाज के अन्य वर्गों अथवा देश की भावी पीढ़ियों को अवक्रमण की लागतों को हस्तांतरित किया जा सकता है।

मोटे स्तर पर, प्राकृतिक स्रोत लेखाकरण प्रणाली का इस दृष्टि से मूल्यांकन करना आवश्यक है कि क्या आर्थिक प्रगति के दौरान हम नीचे की ओर जा रहे हैं या संगत ह्रास योग्य परिसंपत्तियों सहित उत्पादन के प्राकृतिक संसाधन आधार में वृद्धि कर रहे हैं। इसके अलावा, विभिन्न गतिविधियों से संबंधित पर्यावरणीय लागतों और लाभों जिनमें सेक्टोरल नीतियां भी शामिल हैं, का मूल्यांकन किया जाए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि निर्णय करते समय इन कारकों पर पूरा ध्यान दिया गया है।

पर्यावरणीय विनियम के लिए मौजूद 'नियर एक्स क्लूसिव रिलांयस आन फिएट्स' आधारित साधन व्यक्तिगत कारकों को यह अनुमति नहीं देते कि वे अनुपालन की स्वयं की लागतों को कम करें। इससे एक ओर तो अनेक मामलों में अनुपालन नहीं हो पाएगा और दूसरी ओर, अन्य अत्यावश्यक जरूरतों के लिए सामाजिक संसाधनों का अनावश्यक रूप से अपवर्तन होगा । आर्थिक साधन, जिनसे अनेक विकसति और विकासशील देशों में हुए व्यावहारिक अनुभवों द्वारा एक व्यापक एवं सुसंगत संजाति उभरी है, पर्यावरणीय अनुपालन सहित आर्थिक कारकों के हितों को सम्मिलित करके तथा मुख्यतया "प्रदूषण करनेवाला ही चुकाएगा" के सिद्धांत को अमल में लाते हुए कार्य करते हैं । इससे यह सुनिश्चित होता है कि पर्यावरणीय गुणवत्ता के किसी अपेक्षित स्तर पर मानकों को पूरा करने पर खर्च होने वाली समाजगत लागतें कम से कम हो जाती हैं । तथापि, कुछ मामलों में आर्थिक साधनों के प्रयोग के लिए व्यापक मानीटरी की आवश्यकता हो सकती है और इससे भी काफी मात्रा में समाजगत लागतें हो सकती हैं । दूसरी ओर मौजूदा नीति साधनों जैसे 'फिस्कल रेजीम' के लिए वर्धित संस्थागत - क्षमताओं की आवश्यकता में पर्याप्त कमी आ सकती है अथवा इसकी आवश्यकता नहीं रहेगी । तदनुसार, भविष्य में प्रत्येक विशिष्ट विनियामक स्थिति हेतु प्रोत्साहन तथा फीएट आधारित साधनों के युक्ति संगत मेल पर विचार किया जाएगा ।

निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगी :-

(क) क्षमता निर्माण के सहित केंद्रीय सांख्यिकी संगठन द्वारा प्राकृतिक संसाधन लेखाकरण के क्षेत्र में की जा रही पहलों को मजबूत करना ताकि इसे राष्ट्रीय आय लेखाकरण प्रणाली में अंगीकृत किया जा सके । इसके अलावा, सभी महत्वपूर्ण और संगत पर्यावरणीय मानिटरी आंकड़ों के संग्रह, मिलान और विश्लेषण संबंधी प्रणाली को हर तरह से मजबूत करना ।

(ख) निवेश निर्णय प्रक्रिया, प्रबंधन पद्धतियों तथा सार्वजनिक जांच के मामले में अपेक्षाकृत अधिक पर्यावरणीय उत्तरदायिता को प्रोत्साहित करने के लिए बड़े औद्योगिक उद्यमों के लिए वैधानिक वित्तीय विवरणों को तैयार करने में मानकीकृत पर्यावरणीय लेखा प्रणालियों और मानक तैयार करना और उन्हें बढ़ावा देना ।

(ग) वित्तीय संस्थानों को उपयुक्त मूल्यांकन प्रणालियां अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना, ताकि परियोजनाओं को वित्तीय सहायता देते समय पर्यावरणीय खतरों पर पर्याप्त रूप से विचार किया जा सके ।

(घ) सार्वजनिक निवेश संबंधी निर्णय लेते समय संसाधनों के बेहतर आवंटन को प्रोत्साहित करने के लिए पर्यावरणीय मूल्यों को लागतक्षम विश्लेषण के साथ एकीकरण को सरल बनाना ।

(ड़) विशेष संदर्भों में पर्यावरणीय विनियम के लिए आर्थिक साधनों के उपयोग तथा असतत उत्पादन तथा उपभोग के संबंध में कार्य योजना तैयार करना और उसे कार्यान्वित करना ।

(च) आर्थिक लिखितों के शुद्ध लाभों, विनिर्दिष्ट प्राकृतिक संसाधनों तक पहुंच के लिए प्रयोक्ता शुल्क, और स्वैच्छिक अंशदानों की सहायता से एक राष्ट्रीय पर्यावरण सुधार कोष स्थापित करने पर विचार करना । विषाक्त और खतरनाक अपशिष्ट की सफाई करने सहित इस कोष को पर्यावरणीय सुधार के लिए उपयोग किया जा सकता है।

पर्यावरणीय संसाधनों के अवक्रमण के कारण अंततः व्यापक नीति और संस्थागत कमियों में निहित हैं जिसमें विनियामक कमियां भी शामिल हैं, जिसके फलस्वरूप इन पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

5.2 पर्यावरणीय संसाधनों को बढ़ाना और उनका संरक्षण करना।

अंधाधुंध उत्पादन और खपत की पद्धतियां पर्यावरण अवक्रमण के तात्कालिक कारण हैं, लेकिन केवल इन्हीं पहलुओं पर विशेष ध्यान देना ही पर्यावरणीय नुकसान को बचाने के लिए अपर्याप्त होगा। पर्यावरणीय संसाधनों के अवक्रमण के कारण अंततः व्यापक नीति और संस्थागत कमियों में निहित हैं जिसमें विनियामक कमियां भी शामिल हैं, जिसके फलस्वरूप इन पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। तथापि, नीतियों की सीमा तथा कानूनी और संस्थागत क्षेत्र, जो प्रत्यक्ष कारकों पर प्रभाव डालते हैं, वे अत्यधिक व्यापक हैं, जिनमें आर्थिक और मूल्य निर्धारण क्षेत्र और सेक्टोरल तथा क्रास सेक्टोरल नीतियां, कानून और संस्थाएं निहित हैं। तदनुसार, कार्यक्रम संबंधी दृष्टिकोणों के अलावा उनके पर्यावरणीय परिणामों की उत्तरदायिता के लिए इन रेजीमों की समीक्षा और उनमें सुधार लाना अनिवार्य है। इसके अलावा पर्यावरणीय अवक्रमण के कारणों और प्रभावों तथा इनका निवारण कैसे किया जाए इसके बारे में संगत व्यवसायों के विशेषज्ञ प्रैक्टिशनरों और नीति निर्माताओं तथा आम जनता में जागरूकता की कमी है, जिस पर ध्यान देने की जरूरत है। इस उप खंड में, पर्यावरणीय संसाधनों की प्रमुख श्रेणियों, उनके अवक्रमणों तथा उनके निराकरण के लिए किए गए विशेष उपायों को रेखांकित किया गया है।

5.2.1 भूमि अवक्रमण :

मृदा अपरदन, क्षारीय- लवणता, जल-भराव, प्रदूषण से भूमि अवक्रमण तथा कार्बनिक पदार्थों की कमी के कई महत्वपूर्ण कारण हैं, भूमि अवक्रमण के कई आसन्न एवं मूल कारण हैं। इन कारणों में शामिल हैं, वन एवं वृक्ष आवरण की हानि (जिसमें सतही जल बहाव एवं वायु द्वारा अपरदन होता है) असत चराई, अत्यधिक सिंचाई (कई मामलों में बिना उचित, उपयुक्त जल निकास व्यवस्था के,जिससे सोडियम एवं पोटेशियम के लवणों का निथारन होता है), कृषि रसायनों का अनुचित उपयोग (जिससे मिट्टी में जहरीले रसायन एकत्र होते हैं) पशुओं के अपशिष्ट पदार्थों का घरेलू ईंधन के रुप में उपयोग (जिससे भूमि में नाइट्रोजन तथा जैविक पदार्थों की कमी हो जाती है) तथा औद्योगिक एवं घरेलू अपशिष्ट का उपजाऊ भूमि पर निपटान आदि।

भूमि अवक्रमण के ये निकटवर्ती कारण, जल, विद्युत, उर्वरक और कीटनाशकों हेतु अंतर्निहित व सुस्पष्ट आर्थिक सहायता से उत्प्रेरित होते हैं। चराई क्षेत्र, सामान्यतः साझे भू-संपदा संसाधन हैं और उनके प्रबंधन के लिए स्थानीय संस्थानों के अपर्याप्त सशक्तीकरण से जैव सामग्री आधार का अत्यधिक दोहन होता है। अनुकूल नीतियों के अभाव और कुछ विनियामक प्रक्रियाओं के जारी रहने से लोगों में वनीकरण के लिए प्रोत्साहन में कमी आती है जिसके कारण यह हरित आवरण कम हो जाता है।

यदि हम अपने अधिकांश लोगों की आजीविका के मूल आधार को क्षतिग्रस्त नहीं होने देना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि संगत राजकोषीय, प्रशुल्क तथा सैक्टरल नीतियों में भूमि अवक्रमण पर उनके गैर इरादतन प्रभावों पर स्पष्ट रूप से विचार करना होगा।

इसी प्रकार की नीतिगत समीक्षा के अलावा निम्नलिखित विशिष्ट कदम भी उठाए जाएंगे:

(क) अनुसंधान और विकास, ज्ञान संवर्धन, व्यापक निदर्शनों और बड़े पैमाने पर प्रचार- प्रसार, तथा कृषकों का प्रशिक्षण और जहां कहीं आवश्यक हो वहां संस्थागत वित्त की सुलभता भी हो, के माध्यम से विज्ञान आधारित, और परंपरागत सतत भू उपयोग पद्धतियों को अंगीकृत करने के लिए प्रोत्साहित करना।

(ख) भूमि स्वामित्व वाली एजेंसी, स्थानीय समुदायों और निवेशकों को शामिल करते हुए विविध हितधारकों की सहभागिता कायम करके और उसे अंगीकृत करके परती भूमि और अवक्रमित वन भूमि के सुधार को प्रोत्साहित करना।

(ग) मरुस्थलीकरण को रोकने व उसमें सुधार लाने तथा हरित आवरण के विस्तार के लिए थीम आधारित कार्य योजनाएं तैयार करना और उनको कार्यान्वित करना जिनमें जलग्रहणक्षेत्र प्रबंधन कार्यनीतियों को भी शामिल किया जाए।

(घ) जहां पारिस्थितिकीय दृष्टि से व्यावहारिक न हो, वहां झूम खेती के स्थान पर सतत विकल्पों को बढ़ावा देना, परंतु यह सुनिश्चित किया जाए कि इससे स्थानीय लोगों की संस्कृति व उनका संगठन किसी तरह प्रभावित न हो।

(ड) कृषि वानिकी, जैविक कृषि, पर्यावरणीय रूप से सतत फसल रोपण पद्धतियां, और सिंचाई की बेहतर तकनीकों को बढ़ावा देना।

5.2.2 मरुस्थल पारि-प्रणालियां:

भारत के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्र के अंतर्गत 127.3 मिलियन हैक्टेयर (38.8 प्रतिशत) क्षेत्र आता है और यह 10 राज्यों में फैला हुआ है। भारतीय मरुस्थलीय प्राणिजात में स्तनधारी प्रजातियों तथा प्रवासी पक्षियों की बहुलता है। तथापि, प्राकृतिक संसाधन आधार पर जनसंख्या के तेजी से बढ़ते दबावों के कारण मरु पारिप्रणाली के संरक्षण हेतु नए एवं एकीकृत उपाय करना आवश्यक हो गया है। ये दबाव ऐसी पद्धतियों द्वारा बढ़ जाते हैं जिनसे भूमि अवक्रमण होता है,

जैसाकि ऊपर वर्णन किया गया है। इन आवश्यक उपायों में शामिल हैं:

(क) पारंपरिक और विज्ञान आधारित पद्धतियों तथा परंपरागत ढांचे पर निर्भर रहते हुए जल और नमी के संरक्षण, में तेजी लाना।

(ख) स्थानीय प्रजातियों पर आधारित हरित आवरण को बढ़ाना और विस्तारित करना।

(ग) इन क्षेत्रों में कृषिकीय पद्धतियों की समीक्षा करना और ऐसी कृषि पद्धतियों और किस्मों को बढ़ावा देना जो मरुस्थलीय पारिप्रणाली के अनुकूल हों।

5.2.3 वन एवं वन्य जीव

(i) वन :

वन अनेक पर्यावरणीय सेवाएं प्रदान करते हैं । इनमें से सबसे पहला है पर्वतीय एक्वीफर्स को री-चार्ज करना, जिससे हमारी नदियां सतत बनी रहती हैं । ये मृदा संरक्षण भी करते हैं तथा बाढ़ एवं अकाल को रोकते हैं । ये वन्यजीवों के लिए वास स्थल उपलब्ध कराते हैं तथा वनस्पति जात एवं प्राणी जात की आनुवंशिक विविधता के रख-रखाव एवं प्राकृतिक उद्‌भव के लिए पारिस्थितिकीय हालात उपलब्ध कराते हैं । ये पारंपरिक रूप से वनों पर आधारित आदिवासी जातियों के आश्रय स्थल है। ये इमारती लकड़ी, ईंधन लकड़ी तथा अन्य वन उत्पाद प्रदान करते हैं तथा सतत पारि-पर्यटन से आर्थिक लाभ की व्यापक गहन संभावनाएं रखते हैं, विशेषकर स्थानीय समुदायों के लिए ।

दूसरी ओर, हाल के दशकों में, वन क्षेत्र में काफी नुकसान हुआ है, तथापि अब इस रुझान में परिवर्तन के ठोस संकेत दिखाई दे रहे हैं । वनों के नुकसान का मुख्य एवं प्रत्यक्ष कारण वनों का कृषि, आवास, ढांचागत सुविधाओं और उद्योग आदि के प्रयोजनार्थ प्रयोग करना रहा है । इसके अतिरिक्त, ईंधन लकड़ी के वाणिज्यिक निष्कर्षण, अवैध कटाई तथा पशु चारण ने वनों को अवक्रमित किया है । तथापि, इन कारणों की उत्पत्ति इस तथ्य में है कि विभिन्न पक्षकारों ने वनों द्वारा प्रदान किए गए पर्यावरणीय मूल्यों को प्रत्यक्ष वित्तीय लाभों को कम से कम वैकल्पिक प्रयोगों एवं अवैध प्रयोगों से मिलने वाली वित्तीय आय से अधिक तक नहीं पहचाना है । इसके अलावा, चूंकि लंबे अर्से से वनों में रहने वाले समुदायों को वनों के परंपरागत सामुदायिक अधिकारों की सामान्य तौर पर मान्यता थी जिसकी वजह से उन्हें सतत रूप से वनों का फलोपयोग करने का सुदृढ़ प्रोत्साहन प्राप्त है और वे उन्हें अतिक्रमणकारियों से भी बचाते हैं, अतः 1865 में औपचारिक वन कानूनों और संस्थागत घोषणाओं के अनुसरण से इन अधिकारों का देश के अनेक भागों में प्रभावी रूप से लोप हुआ है । इस प्रकार की शक्ति से वंचित कर देने से इन वनों में आसानी से प्रवेश हो सकता है जिसके फलस्वरूप इनका धीरे-धीरे अवक्रमण होता चला गया है । हम इस प्रकार से अभिव्यक्त कर सकते हैं - ''ट्रेजड़ी ओफ द कोमन्स✕' । इससे वन आश्रित समुदायों और वन विभाग के बीच निरंतर भिड़ंत होती है और मुख्यतया न्याय का हनन हुआ है । संविधान के भाग 9 के संगत प्रावधानों के साथ पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम, 1996, मूल पात्रताओं के लिए संरचना बहाली प्रदान कर सकता है ।

यह अनिवार्य है कि प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाएं ।

यह अनिवार्य है कि प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाएं । जहां उन्हें प्राकृतिक संसाधनों के अपरदन के भार को वहन करना है, वही उनका उनके पास इनके प्रबंधन में कोई नियंत्रण नहीं है । महिला सशक्तीकरण संबंधी राष्ट्रीय नीति के संगत प्रावधानों में प्रस्तावित कार्यों के मूल तत्वों को शामिल करने लिए ढांचा शामिल करने का प्रावधान करते हैं।

यह संभव है कि कुछ स्थल विशिष्ट वनेतर गतिविधियों से वन के किसी खास इलाके द्वारा उपलब्ध कराई गई पर्यावरणीय सेवाओं की तुलना में अधिक समग्र सामाजिक लाभ मिल सकते हैं, लेकिन, वनों की बड़े पैमाने पर क्षति से बड़ी दुर्घटना हो सकती है जिसके परिणामस्वरूप देश की पारिस्थितिकी में स्थाई बदलाव हो सकता है, और इसके फलस्वरूप जल स्रोतों एवं भूमि कटाव पर प्रमुख दबाव बढ़ेगा

और इससे कृषि की उत्पादकता, औद्योगिक संभाव्यता, जीवनयापन के हालातों और सूखे और बाढ़ समेत प्राकृतिक आपदाओं की शुरुआत हो जाएगी । किसी भी हालत में परिवर्तित वनों के पर्यावरणीय मूल्यों की बहाली जहां तक संभव हो सके, उसी संबंधित जन को की जानी चाहिए ।

राष्ट्रीय वन नीति, 1988 और भारतीय वन अधिनियम, 1927 तथा इसके तहत विनियमो में वन संरक्षण हेतु एक व्यापक आधार प्रदान किया गया है । 2003 में स्थापित राष्ट्रीय वन आयोग नीति, विधान और वन प्रबंधन के संस्थानिक आधार की समीक्षा कर रहा है । फिर भी, यह आवश्यक है कि वन हानि के कुछ प्रमुख कारणों को देखते हुए कुछ और कदम उठाए जाएं ।

इनमें शामिल हैः

(क) वनों पर निर्भर समुदायों के पारंपरिक अधिकारों को कानूनी मान्यता प्रदान की जाए जिसमें पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम (पीईएसए), 1996 के प्रावधानों को भी ध्यान में रखा जाए । इससे गंभीर ऐतिहासिक अन्याय का प्रतिकार होगा, उन्हें आजीविका मिलेगी, वन विभागों के साथ संभावित झड़प में कमी आएगी और वनों को संरक्षित करने की दृष्टि से इन समुदायों को दीर्घावधि प्रोत्साहन प्राप्त होंगे ।

(ख) देश के वर्तमान 23.69 प्रतिशत भू क्षेत्र से इसे 2012 में 33 प्रतिशत तक वनावरण को बढ़ाने के लिए अवक्रमित वन भूमि के वनीकरण, परती भूमि और निजी और राजस्व भूमि पर वृक्षावरण के लिए एक नई रणनीति तैयार की जाए । रणनीति में मुख्य तत्व शामिल होंगे : (1) प्रत्येक भागीदार के लिए स्पष्ट रूप से परिभाषित बाध्यताओं एवं पात्रताओं के साथ वन विभाग, भू - स्वामित्व वाले अभिकरणों, स्थानीय समुदायों तथा निवेशकों को शामिल करते हुए बहु स्टेक होल्डर भागीदारी का कार्यान्वयन करना, सुशासन सिद्धांतों का अनुसरण करना, पर्यावरणीय, आजीविका एवं वित्तीय लाभ प्राप्त करना ; (2) अधिसूचित वनों से बाहर वन प्रजातियों की खेती पर लगे प्रतिबंधों को युक्तियुक्त बनाना, किसानों को जहां उनके लाभ खेती की अपेक्षा अधिक अनुकूल हो, वहां पर उन्हें सामाजिक एवं खेत वानिकी शुरू करने के लिए सक्षम बनाना, (3) वन प्रबंधन के क्षेत्र में समुदाय आधारित प्रणालियों जैसे संयुक्त वन प्रबंधन, वन पंचायतें व उनके विभिन्न रुपों के साथ-साथ समूचे देश में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी आदि को सार्वभौमिक तौर पर अंगीकार करना, (4) प्राकृतिक वनों की सघनता, कच्छ वनस्पति संरक्षण तथा समुदाय आधारित प्रणालियों के सार्वभौमिकीकरण को बढ़ावा देने के लिए सार्वजनिक निवेश को केंद्रित करना ।

(ग) उन वनों के पर्यावरणीय महत्व को समझने और पुनर्स्थापना के लिए एक उपयुक्त कार्य प्रणाली तैयार करना जिनका अपरिहार्य कारणों से दूसरे उपयोग के लिए अपवर्तन किया जाता है।

(घ) राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के उद्देश्यों एवं सिद्धांतों को कार्यान्वित करने हेतु सघन प्राकृतिक वनों के लिए एक "उत्तम प्रबंधन प्रणाली संहिता" तैयार करना और उसका कार्यान्वयन करना । इस तरह के स्वदेशी आनुवंशिक मूलक विविधता वाले वनों को अद्वितीय महत्व वाले तत्वों के रूप में माना जाना चाहिए ।

(ड़) वन संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत बांस और इसी तरह की अन्य प्रजातियों की ' वन प्रजातियों ' के रूप में अधिसूचना बंद करना ताकि अधिसूचित वन क्षेत्र से बाहर इनकी खेती को सरल बनाया जा सके और आर्थिक गतिविधियों में इनके उत्पादक उपयोग को प्रोत्साहित किया जा सके ।

(च) केवल उन्हीं प्रजातियों के पौधरोपण को बढ़ावा देना जो संरक्षण और मौजूदा पारितंत्रों की सततता के अनुरूप हों ।

(2) वन्य जीव

किसी क्षेत्र में वन्य जीवों की स्थिति पारिस्थितिकीय संसाधनों की दशा का सही सूचक है और इसी प्रकार मानव रहन सहन के प्राकृतिक संसाधन आधार का सूचक भी है। यह पारिस्थितकीय हस्तियों की एक दूसरे पर निर्भरता की प्रकृति के कारण है ("जीवन का जाल") जिसमें वन्यजीव एक महत्वपूर्ण कड़ी है[12] । इसके अतिरिक्त, वन्यजीवों की बहुत सी करिश्माई प्रजातियां "अतुलनीय महत्व" प्रस्तुत करती है, और साथ-साथ सतत पारि-पर्यटन के लिए एक प्रमुख संसाधन आधार है।

तदनुसार, वन्यजीव संरक्षण में समूचे पारि तंत्र की सुरक्षा शामिल है। तथापि, कई मामलों में, ऐसे संरक्षित क्षेत्रों[13] (पीए) की रूपरेखा प्रस्तुत करके तथा प्रवेश पर रोक लगा कर तथा इन क्षेत्रों में मानव गड़बड़ियों के कारण मानव-पशु भिड़ंतों को बढाया है । चूंकि भौतिक अवरोध और बेहतर नीति निर्माण ऐसी भिड़ंतों को अस्थाई रूप से कम कर सकते हैं, यह भी आवश्यक है कि इनके आधारभूत कारणों को दूर किया जाए । ये संबंधित हितधारकों के संरक्षित क्षेत्रों की पहचान एवं रेखांकन में शामिल न होने के साथ-साथ सुरक्षित क्षेत्रों में स्थानीय लोगों, विशेषकर जनजातियों के पारंपरिक अधिकारों को खत्म होने से व्यापक रूप से उत्पन्न हो सकते हैं। पर्यावास स्थलों के आर-पार उचित आनुवंशिक प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए गलियारा बनाने की अत्यधिक आवश्यकता है । चूंकि, वन्यजीव किसी विशिष्ट क्षेत्र तक सीमित नहीं है, सुरक्षित क्षेत्रों के बाहर व्यापक सुरक्षा और पर्यावास स्थलों में वृद्धि को सुनिश्चित करने की भी आवश्यकता है।

वन्यजीव संरक्षण के संबंध में, निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगी :

(क) देश के सभी जैवभौगोलिक क्षेत्रों को उचित प्रतिनिधित्व देने हेतु, संरक्षण एवं सामुदायिक आरक्षों सहित, देश के संरक्षित क्षेत्र नेटवर्क का विस्तार करना। ऐसा करते समय, राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के संदर्भ में सुरक्षित क्षेत्रों के रेखांकन के मानक विकसित करना, विशेषकर, सामाजिक-आर्थिक विकास की आवश्यकता से पारिस्थतिकीय एवं भौतिक लक्षणों को सुसंगत बनाने के लिए ऐसे स्थानीय समुदायों संबंधित लोक अभिकरण तथा अन्य हितधारकों की सहभागिता, जो वन्यजीवों का संरक्षण व सुरक्षा करने में प्रत्यक्ष रूप से दावा करते हैं।

(ख) वन्यजीव सुरक्षा अधिनियम की विभिन्न अनुसूचियों में विशिष्ट प्रजातियों को रखने के लिए मानकों, मानदंडों और आंकड़ों की आवश्यकता का पुनःनिरीक्षण करना।

(ग) मानव पशु भिड़ंत को कम करने के लिए सुरक्षित क्षेत्रों के बाहर संकटापन्न प्रजातियों के संरक्षण के लिए कार्यक्रम तैयार करना और उनका कार्यान्वयन करना।

(घ) सुरक्षित क्षेत्रों में पारि पर्यटन सेवाओं के प्रावधान के लिए सीमांत क्षेत्रों में रह रहे अथवा सुरक्षित क्षेत्रों से पुनः अवस्थापित स्थानीय लोगों के लिए, विशेषतया जनजातियों के लिए मुहैया कराई जा रही वित्त और प्रौद्योगिकी सुविधाओं को सशक्त बनाना व क्षमता निर्माण करना।

---

12. उदाहरणतः शिकारी (बाघ) की उपस्थिति दर्शाती है कि शिकार का आधार (हिरण) प्रचुर मात्रा में है जो दर्शाता है कि वानस्पतिक आवरण काफी अच्छी स्थिति में है जिसके लिए मृदा, जल का संरक्षण तथा प्रदूषण का न होना अनिवार्य है। अंत में सूचक दर्शाता है कि परिस्थितियां मानव स्वास्थ्य तथा आजीविका के अनुकूल है।

13 सुरक्षित क्षेत्रों में वन एवं गैर-वन पारि-तंत्र सम्मिलित हैं उदाहरणार्थ मरुस्थल, समुद्री, अभयारण्य आदि।

(ङ) वनीकरण के लिए बहु-स्टेक होल्डर सहभागिता को समानांतर बनाना, पर्यावरणीय तथा पारि-पर्यटन लाभों को प्राप्त करने के लिए संरक्षण आरक्षों तथा सामुदायिक आरक्षों में वन्य जीवों के वास स्थलों में बढ़ोत्तरी हेतु इसी तरह की सहभागिताएं तैयार करना एवं कार्यान्वित करना।

(च) सुरक्षित क्षेत्रों में प्रवेश प्रतिबंधों के कारण स्थानीय समुदायों द्वारा आजीविका और वन उत्पाद तक पहुंच पुनः बहाल करने के लिए सुरक्षित क्षेत्रों के सीमांत क्षेत्रों में स्थल विशिष्ट पारि-विकास कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना।

(छ) अभिनिर्धारित संकटापन्न प्रजातियों के बंदी प्रजनन और उन्हें जंगल में छोड़ने की क्षमताओं को सुदृढ़ बनाना और उपाय करना।

(ज) संगत विधान के प्रावधानों की निवारक क्षमता को बढ़ाने के लिए उनकी समीक्षा करना व उन्हें और अधिक सख्त बनाना। इसके अलावा वन्यजीवों के प्रति अपराधों से निपटने के लिए आसूचना संग्रह, जांच और मुक÷मे करने के संबंध में प्रवर्तन प्राधिकारियों की क्षमताओं और संस्थागत उपायों को सुदृढ़ बनाना।

(झ) यह सुनिश्चित किया जाए कि मानव गतिविधियां सुरक्षित क्षेत्रों के सीमांत क्षेत्रों में पर्यावास को अवक्रमित न करें अथवा वन्य जीवों को अन्यथा परेशान न करें।

5.2.4 जैव विविधता, पारंपरिक ज्ञान तथा प्राकृतिक धरोहर:

आनुवंशिक विविधता संरक्षण, पारितंत्र की पुनः बहाली सुनिश्चित करने के अतिरिक्त विशिष्ट दबावों के प्रति सहनशील व नए औषधीय उत्पादों वाली फसल की उन्नत किस्मों के विकास हेतु महत्वपूर्ण हैं। स्थानीय समुदायों द्वारा धारित नृ-जीव विज्ञान संबंधी ज्ञान के संदर्भ में पारंपरिक ज्ञान उनकी आजीविका का आधार है और शोध लागतों में कटौती के माध्यम से आनुवंशिक विविधता के महत्व को व्यक्त करने का शक्तिशाली साधन है।

स्थानिक "जैव विविधता रोमांचक क्षेत्र" सहित प्राकृतिक धरोहर स्थल, पवित्र उपवन एवं भू-दृश्य महत्वपूर्ण आनुवंशिक तथा पारितंत्र विविधता के भंडार हैं तथा पवित्र जंगल एवं भू-दृश्य पारि-पर्यटन के महत्वपूर्ण आधार हैं। ये परिवर्तित पर्यावरणीय दशाओं की प्रतिक्रिया में जंगली प्रजातियों के उद्भव हेतु प्रकृति की प्रयोगशालाएं हैं।

भारत, समर्पित वैज्ञानिकों के कई दशकों के प्रयासों के माध्यम से वनस्पतिजात एवं प्राणिजात संसाधनों तथा नृ-जीव विज्ञान संबंधी ज्ञान की विस्तृत सूची विकसित करने के मामले में, भाग्यशाली रहा है।[14] यदि आनुवंशिक संसाधनों का संरक्षण किया जाता है, तथा स्थानीय समुदायों को उनके नृ-जीव वैज्ञानिक ज्ञान के संदर्भ में उचित बौद्धिक संपदा अधिकार दिए जाते हैं तो इस प्रकार भारत इस असाधारण संसाधन आधार को देश हित में समग्र रूप से तथा स्थानीय समुदायों के लिए विशिष्ट रूप से उपयोग करने हेतु सुस्थापित है।

राष्ट्रीय जैव विविधता कार्य नीति और कार्य योजना को निविष्टियां प्रदान करके एक विस्तृत कार्य पूरा किया गया है। इन निविष्टियों की राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के उद्देश्य एवं सिद्धांत, वैज्ञानिक वैधता, वित्तीय एवं प्रशासनिक व्यवहार्यता, तथा वैधानिक दृष्टि से समीक्षा की जाएगी। किसी भी दशा में, निम्नलिखित उपाय किए जाएंगे :-

14 *उदाहरणार्थ, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण संस्थान (बी एस आई), भारतीय प्राणी सर्वेक्षण (जेड एस आई), बम्बई प्राकृतिक विज्ञान सोसायटी (बी एन एच एस), तथा अन्य संस्थानों में।*

(क) वे स्थानीय समुदाय जो इससे प्रभावित हो सकते हैं उनको वैकल्पिक आजीविका तथा संसाधनों में प्रवेश उपलब्ध कराते हुए आनुवंशिक संसाधनों की बहुलता वाले क्षेत्रों की सुरक्षा को सुदृढ़ बनाना।

(ख) जैव विविधता संसाधनों और प्राकृतिक धरोहर की विकास परियोजनाओं के संभावित प्रभावों पर स्पष्ट ध्यान देना। ऐसी परियोजनाओं का लागत-लाभ विश्लेषण द्वारा मूल्य निर्धारण करते समय, अनिश्चितता विस्तार की ऊपरी सीमा पर अथवा इसके आस-पास जैव विविधता संसाधनों का मूल्य निर्धारित करना, विशेषकर, प्राचीन पवित्र उपवन तथा "जैव विविधता बहुल स्थलों" को "बेजोड़ महत्व" वाला समझा जाए।

(ग) देश भर में नामोल्लिष्ट जीन बैंकों में स्थान बाह्य आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण में वृद्धि करना। वनस्पतिजात एवं प्राणिजात की परिसंकटमय प्रजातियों की आनुवंशिक सामग्री का संरक्षण प्राथमिकता आधार पर अवश्य किया जाए।

(घ) पेटेंट अधिनियम, 1970 खुलासे के मुद्दे के अनेक पहलुओं का निदान करता है। पेटेंट के लिए आवेदन करते समय अधिनियम में अनिवार्यतः आविष्कार में उपयोग में लाई गई जैविक सामग्री और भौगोलिक उत्पत्ति के खुलासा करने की अपेक्षा की गई है। खुलासा करने में निष्फल रहने और गलत तरीके से खुलासा करना पेटेंट मंजूर करने की खिलाफत के लिए आधार के रूप में अनुमत हैं और इन आधारों पर पेटेंट रद्द किया जा सकता है। पेटेंट अधिनियम में यह भी अपेक्षा है कि आवेदक ने सक्षम प्राधिकारी की भारत से जैविक सामग्री के उपयोग की आवश्यक अनुमति प्राप्त कर लेने के संबंध में घोषणा पत्र प्रस्तुत करना होगा। जैव विविधता अधिनियम के साथ इन प्रावधानों का सामंजस्य करने की जरूरत है, विशेषकर उन समुदायों के लिए जो ऐसे जैविक सामग्री लाभ का ऐसे ज्ञान को हासिल करके परंपरागत ज्ञान रखते हों।

(ङ) जैविक सामग्री और स्थानीय समुदायों के संबंध में पूर्व सूचित स्वीकृति और उचित और बराबर का लाभ शेयर करने के लिए उचित प्रणाली को तैयार करने की जरुरत है ताकि ऐसी जैविक सामग्री का सूचना, परंपरागत ज्ञान प्रदान करने से देश को आर्थिक लाभ मिल सकें और ये मुद्दे जटिल हैं, अतः उनके क्रियान्वयन के तरीकों को ध्यानपूर्वक बनाने की आवश्यकता है। इसके लिए बौद्धिक संपदा अधिकारों के व्यापार संबंधी पहलुओं के बीच अधिक सांमजस्य प्राप्त करने के प्रयास किए जाएंगे।

5.2.5 अलवणीय जल संसाधन:

भारत के अलवणीय जल संसाधन प्रकृति द्वारा प्रदत्त उपहारों में सबसे महत्वपूर्ण उपहार है, जो इसकी अर्थव्यवस्था एवं मानव उपनिवेश पद्धतियों को समर्थ बनाता है। अलवणीय जल संसाधनों में नदी तंत्र, भू-जल, तथा नम भूमियां सम्मिलित हैं। प्रत्येक की एक विशिष्ट भूमिका है तथा अन्य पर्यावरणीय तत्वों से इसका विशिष्ट जोड़ है।

(i) नदी प्रणालियां :

भारत की नदी प्रणालियों का उद्भव इसके पर्वत पारितंत्रों से होता है, और इनके जल संसाधनों[15] का प्रमुख भाग मैदानों में बसने वाली जनसंख्या को मिलता है। जलवायु परिवर्तन पर अंतरशासकीय पैनल की तीसरी मूल्यांकन रिपोर्ट (आई पी सी सी, 2001) के अनुसार हिमालय के पहाड़ों में लगभग 67 प्रतिशत हिमनद (ग्लेशियर) पिछले दशक में पीछे हटे हैं। उपलब्ध आंकड़े यह भी बताते हैं कि गंगोत्री ग्लेशियर प्रति वर्ष 30 मीटर पीछे हट रहा है। बढ़ता हुआ वैश्विक औसत तापमान शुद्ध पिघलांक दर को बढ़ा सकता है जिसके परिणामस्वरूप ग्लेशियर पीछे हटेंगे और प्रमुख नदियों में बहाव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। मृदा हानि के कारण

15. *राष्ट्रीय जल नीति, 2002 जल प्रयोग आवश्यकताओं को निम्नलिखित क्रम में प्राथमिकता देती हैं : पेयजल, सिंचाई एवं कृषि प्रयोग, जल विद्युत, पारिस्थितिकी सेवाएं, औद्योगिक तथा नेवीगेशन एवं पर्यटन।*

तलछट भार से नदियों में गाद भर जाती है जिससे वनावरण एवं वृक्षावरण को हानि होती है । कृषि, औद्योगिक तथा नागर उपयोग हेतु रास्ते में इनके शुद्ध जल का अधिकांश भाग निकाल लिया जाता है तथा इसके साथ-साथ इनमें मानव एवं पशु अपशिष्ट, कृषि प्रवाह तथा औद्योगिक बहिस्रावों से प्रदूषण भी होता है । यद्यपि नदियों में बहुत से प्रदूषकों को आत्मसात करने एवं उन्हें हानिरहित बनाने की महत्वपूर्ण प्राकृतिक क्षमता है, कई मामलों में वर्तमान प्रदूषण अंतः प्रवाह मुख्य रूप से ऐसी क्षमताओं से अधिक है । यह धारा प्रवाह में उत्तरोत्तर कमी के साथ-साथ, अधिकतर मामलों में सुनिश्चित करता है कि ज्यों-ज्यों हम नदी अनुप्रवाह में जाते हैं नदी जल गुणवता में कमी होती जाती है जिसके परिणामस्वरूप जलीय वनस्पतिजात एवं प्राणिजात की हानि, नदी मछुआरों की आजीविका में हानि, प्रदूषित जल से मानव स्वास्थ्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव तथा सुदूर के जल निकायों और नहरों से जल एकत्र करने में ग्रामीण महिलाओं के कठोर श्रम, कई पक्षी प्रजातियों के वास स्थलों में हानि, अंतःस्थलीय नौकायन क्षमता में कमी होती है। इनके अलावा, भारतीय नदियां, इतिहास तथा लोगों की धार्मिक मान्यताओं से गहन रूप से जुड़ी हुई हैं । तदनुसार मुख्य नदी तंत्रों का अवक्रमण इनके आध्यात्मिक, सौंदर्यपरक, तथा सांस्कृतिक चेतना का हनन करता है । नदी अवक्रमण के प्रत्यक्ष कारण विभिन्न नीतियों एवं विनियामक क्षेत्रों से जुड़े हैं। इनमें सिचाई तंत्रों एवं औद्योगिक उपयोग के लिए प्रशुल्क नीतियां सम्मिलित हैं, जो कि, अपर्याप्त लागत वसूली द्वारा, सिंचाई तंत्र के शीर्षस्थ भागों के समीप अत्यधिक उपयोग को प्रोत्साहित करता है तथा सिंचाई तंत्र के अंतिम छोर को सुखा देता है । जिसका परिणाम है शीर्षस्थ भागों के समीप जल गहन फसलों की अत्यधिक कृषि, जो कि अन्यथा अकुशल जल उपयोग, जल भराव तथा मृदा का और लवणीकरण और क्षारीय करती है। सिंचाई प्रशुल्क सिंचाई तंत्र के उचित रखरखाव के लिए संसाधन भी उपलब्ध नहीं करता है, जिससे इनकी क्षमता में हानि होती है, विशेषकर, रिसाव नुकसान को रोकने हेतु सिंचाई नहरों की परतन के लिए प्राय संसाधन उपलब्ध नहीं होते । इन कारकों के परिणामस्वरूप नदियों के बहाव में कमी होती है । इसी प्रकार प्रदूषण भार मूल्य नीतियों से जुड़ा है जिससे कृषि रसायनों, नागर एवं औद्योगिक जल उपयोग का अकुशल उपयोग होता है । विशेषकर, नागर एवं औद्योगिक जल उपयोग के लिए राजस्व प्राप्ति क्रमशः मलजल एवं बहिस्राव शोधन संयंत्र लगाने एवं उनके रखरखाव हेतु अपर्याप्त है । उद्योगों के लिए प्रदूषण विनियमन विशिष्ट रूप से औपचारिक, स्थानिक नियोजन आधारित नहीं है जिससे कि उद्योगों को एक स्थान पर इक्टठा कर दिया जाए ताकि बहिःस्राव शोधन में बड़े पैमाने की बचत हो और इसके परिणामस्वरूप बहिःस्राव शोधन की अपेक्षाकृत उच्च लागत हो, और इसके गैर अनुपालन हेतु परिणामतः प्रोत्साहनों में वृद्धि हो। तदनुसार, मूल्य निर्धारण नीति क्षेत्र और विनियामक तंत्रों को उनके संभावित प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों की दृष्टि से समीक्षा करने की जरूरत है ।

यद्यपि नदियों में बहुत से प्रदूषकों को आत्मसात करने एवं उन्हें हानिरहित बनाने की महत्वपूर्ण प्राकृतिक क्षमता है, कई मामलों में वर्तमान प्रदूषण अंतः प्रवाह मुख्य रूप से ऐसी क्षमताओं से अधिक है ।

प्रदूषण भार मूल्य नीतियों से जुड़ा है जिससे कृषि रसायनों, नागर एवं औद्योगिक जल उपयोग का अकुशल उपयोग होता है ।

नदी प्रणालियों के लिए कार्य योजना के निम्नलिखित तत्व हैं :

(क) हिमानी और नदी प्रवाहों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का मूल्यांकन करने के लिए हिमनद विज्ञान में अनुसंधान को बढ़ावा देना ।

(ख) संबंधित नदी प्राधिकरणों द्वारा नदी मुहानों के प्रबंधन के लिए एकीकृत दृष्टिकोण[16] को बढ़ावा देना और ऐसा करते समय नदी के ऊपरी भागों और निचले भागों और जल निकालने का ऋतु, भूमि और जल के मध्य अंतर-संबंध प्रदूषण भार और प्राकृतिक पुनरुद्भवन क्षमताओं के बारे में विचार कर लिया जाए ताकि पर्याप्त जलधारा को बनाए रखना विशेष रूप से पारिस्थितिकीय मान के रखरखाव में और सभी ऋतुओं में उनके समूचे रास्ते में जलगुणत्ता मानकों को बनाए रखना सुनिश्चित किया जा सके ।

(ग) नदी और ज्वारनदमुखी के वनस्पतिजात एवं प्राणिजात के प्रभावों पर विचार करना और उन्हें कम करना तथा इसके परिणामस्वरूप आजीविका स्रोत आधार में परिवर्तन, बहुउद्देशीय नदी परियोजनाओं, विद्युत संयंत्रों और उद्योगों के संबंध में विचार करना ।

16. राष्ट्रीय जल नीति इस कार्यनीति का आगे विवरण देती है ।

घ) शहरी केंद्रों के भवन निर्माण उपनियमों में जल संचयन भंडारों और नलों की स्थापना तथा अन्य उपलब्ध विनियामक तंत्रों को अनिवार्य बनाने पर विचार करना।

इ) नम भूमियों के संरक्षण और उनके युक्तियुक्त उपयोग को नदी मुहाना प्रबंधन के अंतर्गत एकीकृत करना जिसमें जलवैज्ञानिक क्षेत्रों और जैव विविधता के संरक्षण के लिए सभी संगत स्टेकहोल्डरों विशेषकर स्थानीय समुदायों को सहयोजित करना।

च) मृदा अपरदन को रोकने तथा हरित आवरण में सुधार के लिए नदी किनारों और जलग्रहण क्षेत्रों पर वनीकरण हेतु विशेष घटक शामिल करना।

(2) **भू-जल**

देश के बहुत से भागों में भूमिगत जलाशयों में भू जल विद्यमान है। भूसतह के निकट जलाशय तब तक बने रह सकते हैं जब तक वह वार्षिक रूप अवक्षेपण से पुनः भरते रहते हैं लेकिन इस पुनर्भरण की दर पर मानवीय हस्तक्षेपों का प्रभाव पड़ता है। दूसरी ओर गहरे जलाशय कठोर चट्टानों के तले में स्थित होते हैं। इन गहरे जलाशयों में बहुत ही शुद्ध जल सामान्य रूप से पाया जाता है लेकिन ये केवल अनेक वर्षों में दुबारा भरते हैं इसलिए इनका उपयोग के लिए संरक्षण करना अत्यावश्यक है और इनका उपयोग ऐसी अवधि में ही किया जाए जब कि घोर सूखा आदि पड़े और ऐसी घटना सैकड़ों वर्षों बाद ही घटित होती है। भूमिगत जलाशयों की सीमाएं सामान्य तौर पर किसी स्थानीय सार्वजनिक प्राधिकरणों अथवा निजी क्षेत्राधिकार में नहीं होतीं और आसानी से प्राप्य नहीं हैं और न ही इस जल को आसानी से निकालने पर देखरेख की जा सकती है जिसके फलस्वरूप भूजल एक खुले प्राप्य स्रोत के रूप में बनने से नहीं बचाया जा सकता।

हाल के दशकों में देश के कई क्षेत्रों में जल स्तर तेजी से गिरा है। ऐसा कृषि, उद्योग, तथा शहरी उपयोग हेतु वार्षिक पुनर्भरण दर से अधिक जल दोहन के कारण होता है। शहरी क्षेत्रों में घरेलू एवं औद्योगिक उपयोग हेतु जल दोहन के अलावा, आवास तथा अवसंरचना जैसे सड़क, पर्याप्त पुनर्भरण को रोकते हैं। इसके अलावा भू-जल का कुछ प्रदूषण एकत्र किए गए परिसंकटमय अपशिष्ट के रिसाव तथा विशेष रूप से कीटनाशकों व कृषि रसायनों के प्रयोग करने के कारण होता है। भूमि जल का संदूषण भू-मूलक, जैसे-प्राकृतिक जमावों से आर्सेनिक और फ्ल्यूराइड के रिसाव के कारण होता है। चूंकि भूजल पेयजल का एक स्रोत है इसलिए इसके प्रदूषण और संदूषण के स्वास्थ्य पर कई गंभीर प्रभाव होते हैं।

भूजल के छीजने के प्रत्यक्ष कारणों का मूल बिजली एवं डीजल की मूल्य संबंधी नीतियों में है।

भूजल के छीजने के प्रत्यक्ष कारणों का मूल बिजली एवं डीजल की मूल्य संबंधी नीतियों में है। बिजली के मामले में जहां व्यक्तिगत मीटर नहीं लगाए जाते हैं, वहां बिजली कनेक्शन के लिए एकमुश्त राशि खर्च की जाती है जो बिजली की सीमांत लागत को प्रभावी रूप से शून्य बना देती है। डीजल के लिए अर्थसहायता भी पर्याप्त स्तर से कहीं नीचे निष्कर्षण की सीमांत लागत को भी कम कर देती है। इस तथ्य को देखते हुए कि भूजल एक खुले रूप से उपलब्ध स्रोत है अतः उपयोक्ता तब "युक्ति संगत "(अर्थात उसके निजी प्ररिप्रेक्ष्य में) भू जल को तब तक निकालता है जब तक कि उसे सीमांत मूल्य निष्कर्षण की न्यून सीमांतक लागत को बराबरी पर न ले आए[17]।

परिणाम यह है कि सभी उपयोक्ताओं द्वारा सही ढंग से भू जल को न निकालना और इसके परिणाम स्वरूप जल स्तर गिर जाता है। अनेक जल आधारित फसलों का समर्थन मूल्य, मूल्य आर्थिक समर्थन में अटक जाता है और इसके परिणाम स्वरूप वह जल आधारित फसलों की अपेक्षा ऐसी फसलों को प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहन देता है। तटीय क्षेत्रों में भूमिजल का अत्यधिक दोहन तथा इसका अपर्याप्त पुनर्भरण भी लवणीय तत्वों से संबंधित समस्याएं भी हो सकती हैं जिससे अनेक स्वास्थ्य प्रभाव और भू- उत्पादकता में हानि हो सकती है।

17. *सीमांतक लागत किसान को बिजली और डीजल (शून्य) अथवा छोटे श्रमिक को बिजली और डीजल की सीमांतक लागत और अवरोही लागत को बराबर कर देती है। नलकूप की पूंजीगत लागत तथा कनेक्शन चार्ज की समान दर संक लागते हैं और जल की सीमांत लागत के हिसाब में नहीं ली जाती।*

गिरते हुए जल के स्तरों के अनेक सामाजिक प्रभाव भी होते हैं । गहरे जलाशयों की खनन की संभावना के अलावा "अंतिम जल भंडार के पेयजल के स्रोत" को तलाशना । भूजल निकालने के लिए पंपों और नलकूपों की पूंजीगत लागत, ऐसी स्थिति में जब जल स्तर बहुत ही नीचे हो, अपेक्षाकृत कही अधिक होती है और इसमें इस बात का भरोसा नहीं कि पानी वास्तविक रूप में मिल ही जाएगा । ऐसे हालात में जो भी कोई सीमांत किसान जो आनन फानन ब्याज की दरों पर धनराशि उधार लेता है और ऐसे मामले में जब उक्त प्रयास से जल उपलब्ध न हो, वह अपने ऋणों की अदायगी करने में कठिनाई महसूस करता है । इससे वह बरबाद हो जाएगा या स्थिति और भी बदतर हो जाएगी । चाहे ऐसे प्रभाव खतरनाक न भी हों तो भी बिजली और डीजल का अत्यधिक उपयोग तो होगा ही ।

तदनुसार, भूजल का सही ढंग से इस्तेमाल किए जाने के लिए यह ठीक होगा कि किसानों को बिना मीटर के बिजली की आपूर्ति निरस्त की जाए जो कि उन्हीं के अपने हित में है। यह भी जरूरी है कि उतरोत्तर रूप से यह सुनिश्चित कर लिया जाए कि बिजली दरों और डीजल के मूल्यों को तय करते समय पर्यावरणीय प्रभावों को हिसाब में ले लिया जाए ।

भूजल का सही ढंग से इस्तेमाल किए जाने के लिए यह ठीक होगा कि किसानों को बिना मीटर के बिजली की आपूर्ति निरस्त की जाए जो कि उन्हीं के अपने हित में है।

शहरी क्षेत्रों में अंधाधुंध भवन निर्माणों और आधारभूत ढांचों के निर्माण से प्राकृतिक भू-जल का भरना बड़े पैमाने पर अवरुद्ध हो रहा है । यह शहरी क्षेत्रों में जल स्तर के गिरने का अतिरिक्त कारण है । क्योंकि शहरी उपयोग के लिए भू-जल बहुत अधिक मात्रा में निकाल लिया जाता है । ग्रामीण क्षेत्रों में वर्षा जल उपयोग और कृत्रिम रीचार्ज जैसी कई लागत प्रभावी तकनीकें भू-जल रीचार्ज को बढ़ाने में किफायती साबित हुई हैं, अनेक लागत प्रभावी वर्षा जल संचयन और बनावटी रिचार्ज तकनीकों से भूजल रीचार्ज में वृद्धि देखी गई है । भूमिगत जल को रिचार्ज करने के लिए प्रभावी पारंपरिक जल प्रबंधन की कई तकनीकें स्थानीय समुदायों द्वारा पम्प सेटों के एक्सट्रैक्शन के कारण बंद कर दी गई थीं और इन्हें पुनः बहाल करने की आवश्यकता है । अंत में वृक्षावरण में वृद्धि, मृदा नमी संरक्षण और मृदा अपरदन को रोकने में भी प्रभावशाली है ।

कृषि रसायनों से भूमिगत जल का प्रदूषण भी उनके अनुचित उपयोग से जुड़ा हुआ है, मूल्य निर्धारण नीतियों के कारण, विशेषकर रासायनिक कीटनाशकों के साथ-साथ कृषि विज्ञान की प्रकियाएं, जो संभाव्य पर्यावरणीय प्रभावों को ध्यान में नहीं रखते हैं । मृदा परतों के माध्यम से पारगमन करते हुए, जैविक प्रदूषण भार को भूमिगत जल में बहुत अधिक हटा देती है, यह विभिन्न रसायनिक कीटनाशकों के विषय में सही नहीं है । कीटनाशक जब भू-जल में मिल जाते हैं तो वे स्वयं ही प्रदूषण का स्रोत बन जाते हैं ।

निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगी :

(क) विद्युत शुल्क और डीजल के मूल्य निर्धारण के भूमिगत जल टेबल पर प्रभावों का स्पष्ट लेखा-जोखा करना

(ख) किसानों को स्प्रिन्क्लर अथवा ड्रिप सिंचाई जैसे सक्षम जल उपयोग तकनीकों के बारे में प्रोत्साहित करना । सक्षम जल उपयोग से उपयुक्त और लाभकारी वैकल्पिक फसलों को आवश्यक मूल्य, निवेश और विस्तारण सहयोग प्रदान करना । इसके साथ-साथ नामोद्दिष्ट संस्थागत तंत्र के माध्यम से भूमि जल की मात्रा संबंधी मैप की उपलब्धता भी निश्चित की जाए ।

(ग) नामोदिष्ट संस्थान के माध्यम से भू-जल क्षमता मानचित्रों की उपलब्धता सुनिश्चित करना।

(घ) भूमिगत रिचार्ज को बढ़ाने के लिए वर्षा जल उपयोग और कृत्रिम रीचार्ज की प्रैक्टिसों के लिए समर्थन करना और पारंपरिक प्रविधियों को पुनः शुरु करना।

(ड़) भूमिगत जल रीचार्ज की वृद्धि के लिए संबंधित शहरी क्षेत्रों में सभी नए निर्माण कार्यों में जल संचयन और कृत्रिम रिचार्ज के साथ-साथ मार्ग स्थलों के लिए डिजाइन तकनीक और अवसंरचना को अनिवार्य बनाना। संगत स्टेक होल्डरों की क्षमता का विकास करना जल एकत्रण तकनीक पर वैब आधारित सूचना प्रदान करना।

(च) जलाशय क्षमता और वार्षिक रीचार्ज का ध्यानपूर्वक मूल्यांकन करने के पश्चात बड़े औद्योगिक और वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों द्वारा भूमिजल के प्रयोग को विनियमित करने हेतु व्यापक कार्यनीति तैयार करना और कार्यान्वित करना।

(छ) आर्सेनिक, फ्लूराइड और अन्य विषैले पदार्थों को हटाने के लिए ग्रामीण पेय जल परियोजनाओं के लिए अनुकूल लागत प्रभावी तकनीकों में अनुसंधान और विकास को समर्थन देना और संगत क्षेत्रों में ग्रामीण पेय जल स्कीमों में उनको अपनाने के लिए मुख्य धारा में लाना।

(ज) अभिनिर्धारित उद्योगों और उपयोगिताओं में जल मूल्यांकन और जल लेखा परीक्षा को अनिवार्य बनाकर औद्योगिक प्रक्रियाओं में जल की प्रति इकाई खपत की उत्पादकता में सुधार करना।

(झ) जहरीली अपशिष्ट सामग्री के निपटारे के लिए उपयुक्त स्थलों की पहचान की जाए और भू जल में विषैले अपशिष्ट के चलन को बचाने के लिए उपचारी उपाय किए जाएं।

(ञ) प्रदूषण के प्रमुख गैर प्वाइंट स्रोत उर्वरकों, कीटनाशकों और कृमिनाशकों का अत्यधिक उपयोग करना है। ये प्रदूषक भू-जल और सतही जल के प्रदूषण में सहायक हैं। उर्वरकों, कीटनाशकों और कृमिनाशकों के स्वैच्छिक उपयोग को जल गुणवत्ता में सुधार के लिए प्रोत्साहन दिया जाए।

(iii) **नम भूमियां :**

नमभूमियां[18], प्राकृतिक और मानवनिर्मित, अलवणीय अथवा खारा जल अनेक पारिस्थितिकीय सेवाएं प्रदान करते हैं। वे जलीय वनस्पतिजात और प्राणिजात के साथ-साथ, प्रवासी प्रजातियों सहित पक्षियों की बहुत संख्या में प्रजातियों को पर्यावास प्रदान करती हैं। पक्षियों की सघनता, विशेषकर, एक विशेष नम भूमि की पारिस्थितिकीय अवस्था का सटीक संकेत है। विविध नमभूमियां पर्याप्त अद्वितीय पारिस्थितिकीय विशेषताओं के कारण '' रामसर स्थल ''[19] जैसी अंतर्राष्ट्रीय मान्यता के पात्र हैं।

नमभूमियां कृषि, पशुपालन और घरेलू उपयोग, अपवहन सेवाओं के लिए ताजा जल प्रदान करती हैं और मछुआरों को आजीविका प्रदान करती है। बड़ी नमभूमियां पर्यटन और मनोरंजन स्थल[20] को कायम रखने में भी एक महत्वपूर्ण संसाधन प्रदान करती हैं।

18 रामसर कन्वेंशन यह परिभाषित करता है कि वे नम भूमियां जो मार्श, फेन, पीट भूमि अथवा अस्थाई हो, जल के साथ चाहे वह भाटा के समय गहराई 6 मीटर से अधिक न बढ़ती हो, इसके लिए इस परिभाषा को व्यापक क्षेत्र प्रदान करता है। ठहरा हुआ है अथवा बढ़ता हुआ, ताजा, खारा अथवा नमकीन हों, जिनमें समुद्री जल के क्षेत्र भी शामिल है जिसकी अल्प ज्वार

19. उदाहरणार्थ चिलका झील और पूर्वी कोलकाता नम भूमियां।

20. उदाहरणार्थ डल झील (श्रीनगर), उधगमंडलम झील और नैनीताल झील

वे विद्युत, प्रौद्योगिकी और पूंजी सघन नगरपालिका मल जल संयंत्र के विकल्प के रूप में भी प्रयोग में लाई जा सकती हैं, तथापि उनकी सम्मिलित क्षमता उचित अनुमान किए बिना यदि इस प्रयोजन के लिए अथवा ठोस और परिसंकटमय कचरे को फेंकने के लिए उन्हें इस्तेमाल किया जाता है तो वे स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न करते हुए अत्यधिक प्रदूषित हो जाएंगे। नम भूमियों[21] में अनजाने में कुछ अन्य विदेशी प्रजातियों के वनस्पतिजात लाए जाने से भी उनकी पारिस्थितिकी में अवक्रमण हुआ है ।

नमभूमियों को प्रदूषण के अलावा जल निकासी तथा मानव आवासों और नमभूमियों को कृषि के लिए परिवर्तित करने के कारण भी खतरा है । यह इसलिए होता है क्योंकि सार्वजनिक प्राधिकरण और व्यक्ति, जिन्हें नमभूमियों का क्षेत्राधिकार है, उन्हें नमभूमियों से कम राजस्व प्राप्त होता है जब कि वैकल्पिक उपयोग से उन्हें अप्रत्याशित लाभ हो सकते हैं। तथापि, कई मामलों में नमभूमि पर्यावरणीय सेवाओं का आर्थिक मूल्य वैकल्पिक उपयोगों से प्राप्त कीमत से अधिक हो सकता है। दूसरी ओर, प्रदूषण के कारण उनकी पर्यावरणीय सेवाओं के आर्थिक मूल्य में कमी आ सकती है, साथ ही साथ उन्हें कचरा फेंकने के स्थल के रूप में उपयोग करते समय, प्रदूषण से स्वास्थ्य पर होने वाले दुष्प्रभावों पर ध्यान नहीं दिया जाता।

रामसर स्थल के संदर्भ में की गई अंतर्राष्ट्रीय वचनबद्धताओं से परे नमभूमि विनियमन की कोई औपचारिक प्रणाली विद्यमान नहीं है । नमभूमियों के संबंध में एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें प्रत्येक अभिनिर्धारित नमभूमि को उसके अन्य प्राकृतिक घटकों के साथ कारणात्मक संबंधों, मानव आवश्यकताओं तथा उसके अपने गुणों के संदर्भ में देखा जाए ।

निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगीः-

(क) पहचान की गई महत्वपूर्ण नमभूमियों के अवक्रमण को रोकने के लिए और उनका संरक्षण बढ़ाने के लिए एक विधिक प्रवर्तनीय विनियामक तंत्र स्थापित करना । ऐसी नमभूमियों की एक राष्ट्रीय सूची विकसित करना ।

(ख) स्थानीय समुदायों और अन्य सुसंगत स्टेकहोल्डरों के सहयोग से प्रत्येक महत्वपूर्ण सूचीबद्ध नमभूमियों के लिए संरक्षण और विवेकपूर्ण व उपयोगी कार्यनीतियां प्रतिपादित करना।

(ग) पहचान की गई नम भूमियों के लिए सार्वजनिक अभिकरणों, स्थानीय समुदायों और निवेशकों के माध्यम से बहु स्टेकहोल्डर सहभागिता के माध्यम से पारिस्थितिकी पर्यटन कार्यनीतियां तैयार करना व कार्यान्वित करना ।

(घ) ऐसी परियोजनाओं के पर्यावरणीय आकलन के दौरान महत्वपूर्ण विकास परियोजनाओं की नमभूमियों पर उनके प्रभाव का स्पष्ट लेखा-जोखा, विशेषकर, नमभूमियों की पर्यावरणीय सेवाओं के आर्थिक मूल्य में कमी का लागत-लाभ विश्लेषण में स्पष्ट लेखा-जोखा रखना ।

(ड़) नमभूमियों की सुरक्षा के लिए कार्यनीतियां बनाते समय विशिष्ट उत्कृष्ट नमभूमियों पर "अतुलनीय महत्व " की नमभूमियों के रूप में विचार करना चाहिए ।

(च) गरीबी दूर करने और आजीविका में सुधार करने हेतु ग्रामीण तालाबों और जल कुंडों के संरक्षण को सैक्टोरल विकास योजनाओं में शामिल करके नमभूमि संरक्षण को एकीकृत करना तथा नमभूमियों के संरक्षण और सतत उपयोग के प्रयासों से चालू ग्रामीण ढांचागत विकास और रोजगार सृजन कार्यक्रमों के साथ जोड़ना । इसके अलावा ग्रामीण स्तर के जल कुंडों के संरक्षण के लिए पारंपरिक तकनीकों को बढ़ावा देना ।

21. उदाहरणार्थ जल कुंभी ।

5.2.6 पर्वतीय पारि-प्रणालियां :

पर्वतीय पारि-प्रणालियां, वन आवरण प्रदान करने, बारहमासी नदियों के तंत्र को बनाए रखने, उत्पत्ति संबंधी विविधता संरक्षित करने और पर्यटन बनाए रखने के माध्यम से आजीविका के लिए व्यापक संसाधन आधार प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं । इसी प्रकार वे मानव जनित कार्रवाइयों के प्रति अति संवेदनशीलता के संदर्भ में सबसे अधिक नाजुक पारिस्थितिकी तंत्रों में से एक हैं। वनों की कटाई, नदी घाटियों का जलमग्न होना, शुद्ध जल के स्रोतों का प्रदूषण, प्राकृतिक स्थलों का नाश, मानव वास स्थलों का अवक्रमण, उत्पत्ति संबंधी विविधता की क्षति, ऐसी प्रजातियों का पौधरोपण जो पर्वतीय पर्यावरण के संरक्षण के अनुकूल नहीं हैं, हिमनदों का पीछे हटना और प्रदूषण के कारण पर्वतीय पारितंत्रों पर अत्यधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । इसके अत्यधिक महत्वपूर्ण प्रत्यक्ष कारण लट्ठों की अवैध कटाई, व्यावसायिक ईंधन लकड़ी एकत्रण के साथ-साथ अनियोजित शहरीकरण और भवन निर्माण उपनियमों के प्रवर्तन में कमी, स्वच्छता प्रणालियों का अभाव अथवा जीर्णावस्था, प्रदूषण उद्योगों की स्थापना, अल्प मूल्य के खनिजों का बड़े पैमाने पर खनन, जलवायु परिवर्तन और कृषि रसायनों का अत्यधिक उपयोग जैसी दोषपूर्ण अवसंरचनाएं हैं । मूलभूत कारण वनीकरण से पर्याप्त वित्तीय लाभ प्राप्त करने के लिए और वन संसाधनों के गैर-विनाशकारी प्रयोग के लिए स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाने, कृषि रसायनिकों से संबंधित मूल्य नीतियां, प्रदूषण मानदंडों का अपर्याप्त प्रवर्तन, शहरों के लिए गलत संस्थागत क्षमताएं, क्षेत्रीय योजनाएं और नगरपालिका विनियामक कार्य और अवसंरचना के पर्यावरणीय प्रभाव आकलन की तैयारी के साथ-साथ नगरपालिका अवसंरचना को वित्तपोषण देने के तरीकों पर सर्वसम्मति का अभाव और सहायक नीतियों के अभाव से संबंधित हैं । स्पष्टतया, सुसंगत सैक्टोरल और क्रॉस-सेक्टोरल नीतियों और संस्थागत क्षमता निर्माण की समीक्षा के माध्यम से इन कमियों को दूर करने की आवश्यकता है ।

इसके अतिरिक्त कार्य योजना के निम्नलिखित मामलों पर कार्य शुरू किया जाएगा :-

क) पर्वतीय पारिप्रणालियों के सतत विकास के लिए उपयुक्त भूमि उपयोग आयोजना और जलग्रहणक्षेत्र प्रबंधन पद्धतियों को अपनाना ।

ख) संवेदनशील पारिप्रणालियों के नुकसान को रोकने अथवा उसे न्यूनतम करने और भूदृश्यों को नष्ट होने से बचाने के लिए पर्वतीय क्षेत्रों में ढांचागत निर्माण हेतु उत्तम कार्य पद्धति मानक अपनाना ।

ग) जैविक खेती को बढ़ावा देकर, फसलों की पारंपरिक किस्मों की खेती और बागवानी को प्रोत्साहित करना , ताकि किसान अतरिक्ति मूल्य प्राप्त कर सकें ।

घ) निवेशकों की वित्तीय, तकनीकी और प्रबंधकीय क्षमताओं को बढ़ाते हुए स्थानीय समुदायों को बेहतर आजीविका के अवसर उपलब्ध कराने के लिए बहु स्टेकहोल्डर सहभागिता और पर्यटन सुविधाओं और पारिस्थितिकीय संसाधनों की सुलभता ''उत्तम पद्धति'' मानदंडों के अंगीकरण के माध्यम से पर्यटन को कायम रखते हुए बढ़ावा देना ।

इ) पर्यटकों की पर्वतीय क्षेत्रों में संख्या को विनियमित करने हेतु कदम उठाना जिससे कि उनकी संख्या पर्वतीय पारिस्थितिकी की वहन क्षमता के भीतर रहे ।

च) पर्वतीय स्थलों की सुरक्षा के लिए कार्यनीतियां विकसित करने में "अतुलनीय मूल्य" के अस्तित्व के रूप में उन पर विचार करना ।

5.2.7 तटीय संसाधन

तटीय पर्यावरणीय संसाधनों में कच्छ वनस्पतियों, प्रवाल भित्तियों, नदीमुख, तटीय वन, उत्पत्ति संबंधी विविधता, बालू टीले, भू-आकृतिविज्ञान, बालू तट, कृषि और मानवीय आवासों के लिए भूमि, तटीय अवसंरचना और धरोहर स्थल सहित प्राकृतिक और मानव निर्मित परिसंपत्तियों का एक विविधतापूर्ण समूह है । ये समुद्री प्रजातियों के लिए वास-स्थल प्रदान करते हैं जो बड़ी संख्या में मछुआरों को, अत्यधिक विषम मौसम से सुरक्षा के लिए एक संसाधन आधार, पर्यटन कायम रखने और कृषि व शहरी आजीविका के लिए संसाधन आधार प्रदान करते हैं । हाल के वर्षों में, तटीय संसाधनों में महत्वपूर्ण अवक्रमण हुआ है जिसके लिए प्रत्यक्ष कारणों में खराब तरीकों से नियोजित मानव आवास, उद्योगों की अनुचित अवस्थिति और अवसंरचना, उद्योगों और आवासीय बस्तियों से प्रदूषण और सजीव प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक शोषण शामिल है । भविष्य में, जलवायु परिवर्तन के कारण समुद्र तलों में बढ़ोतरी से तटीय पर्यावरण पर मुख्य तौर से प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकते हैं । इन प्रत्यक्ष तथ्यों के गहन कारणों में तटीय प्रबंधन योजनाओं के सूत्रीकरण और क्रियान्वयन के लिए अपर्याप्त संस्थागत क्षमताएं और स्थानीय समुदायों की सहभागिता, कई तटीय संसाधनों की मुक्त सुलभ प्रकृति और स्वच्छता और अपशिष्ट प्रबंधन के प्रावधान के उपाय पर सर्वसम्मति का अभाव है ।

निम्नलिखित पर आगे कार्रवाई की जाएगीः-

(क) कच्छ वनस्पतियों के सतत प्रबंधन को वानिकी क्षेत्र की विनियामक व्यवस्था के अंतर्गत लाना ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि स्थानीय समुदायों को आजीविका मिलती रहे ।

(ख) प्रवाल भित्तियों के पुनरुद्धार के लिए उपलब्ध तकनीकों का प्रसार करना और ऐसी तकनीकों के अनुप्रयोग पर आधारित गतिविधियों को समर्थन देना ।

(ग) योजनाओं तथा ढांचागत आयोजनाओं व निर्माण मानकों में जलवायु परिवर्तन तथा भू-विज्ञान संबंधी घटनाओं के संदर्भ में समुद्र स्तर में वृद्धि तथा तटीय क्षेत्रों की संवेदनशीलता पर विचार करना ।

(घ) संबंधित नीतियों, विनियमों और कार्यक्रमों में तटीय क्षेत्रों, नमभूमियों तथा नदी प्रणालियों के बीच संपर्कों पर ध्यान देते हुए एकीकृत तटीय प्रबंधन के लिए व्यापक दृष्टिकोण अपनाना ।

(ड़) मानव स्वास्थ्य पर पोत भंजन गतिविधियों के प्रभावों के नियंत्रण व निराकरण तथा समुद्री व समुद्र के निकट के संसाधनों के सुदृढ़ीकरण हेतु कार्यनीति बनाना ।

5.2.8 प्रदूषण उपशमन :

किसी भी वस्तु के उत्पादन और उपभोग से उत्पन्न अपशिष्ट पदार्थों का अनिवार्य[22] उत्सर्जन, प्रदूषण है । प्रदूषण ग्राही माध्यम नामशः वायु, जल, मृदा अथवा विद्युत- चुंबकीय स्पैक्ट्रम की गुणवत्ता पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालना है और जब यह क्षीण माध्यम एक अभिग्राहक के रूप में काम करता है तो एक सजीव प्राणी

22. *मौलिक प्राकृतिक नियम के संचालन के परिणामस्वरूप '' अनिवार्य '' के रूप में, प्रणालियों के आस-पास के वातावरण सहित लिया गया उत्क्रम माप (एन्ट्रोपी), उष्मगतिविज्ञान के दूसरे नियम से लिया गया अपसारण । तथापि '' अनिवार्य '' का यह अर्थ नहीं है कि प्राकृतिक नियम की प्रदत्त सीमाओं के अंदर अपशिष्ट उत्सर्जन को (एक पाइंट तक) घटाया नहीं जा सकता है अथवा कम हानिकारक स्वरूप में किया जा सकता है और पुनः चक्रित किया जा सकता है ।*

प्रदूषण के प्रभाव गरीब, अथवा महिलाओं अथवा बच्चों अथवा विकासशील क्षेत्रों पर भिन्न-भिन्न हैं, जिनका इसके उत्सर्जन में कम योगदान है और तदनुसार, उपशमन की लागत और लाभ की समता के लिए महत्वपूर्ण प्रभाव है।

भी अभिग्राहक को प्रभावित करता है । विशिष्ट रूप से अभिग्राहक पर पड़ने वाला प्रभाव प्रतिकूल होता है,परंतु सदैव[23] नहीं । विशिष्ट रूप से पारितंत्रों की प्रदूषण को समावेश करने की कुछ नैसर्गिक क्षमताएं होती हैं । तथापि, ये प्रदूषक और पारितंत्र की प्रवृत्ति को ध्यान में रखते हुए परिवर्तित होते रहते हैं । सामान्य तौर पर, प्रदूषण के बहिस्राव को कम करना, इसको उत्सर्जन के बाद शमन करने और जिससे प्राप्त कर रहे हों उस माध्यम अथवा अभिग्राहक का शोधन करने से सस्ता है । प्रदूषण के प्रभाव गरीब, महिलाओं, बच्चों अथवा विकासशील क्षेत्रों पर भिन्न-भिन्न हैं, जिनका इसके उत्सर्जन में कम योगदान है और तदनुसार, उपशमन की लागत और लाभ की समता के लिए महत्वपूर्ण प्रभाव है ।

(i) **वायु प्रदूषण**

वायु प्रदूषण के मानव स्वास्थ्य के साथ-साथ अन्य सजीव प्राणियों, मानव निर्मित धरोहर और जीवन-दात्री प्रणालियों अर्थात भूमंडलीय जलवायु पर प्रतिकूल प्रभाव हो सकते हैं । प्रदूषकों के बने रहने की समयावधि, प्रदूषण स्रोत के स्थान तथा मौजूदा वायु धाराओं के अनुसार प्रदूषण ग्राहय साधन निकट भविष्य से अनेक दशकों तथा भिन्न-भिन्न अंतरालों में घरेलू, स्थानीय, क्षेत्रीय अथवा भूमंडल स्तर पर अवस्थित हो सकते हैं ।

जीवाश्म ऊर्जा के प्रयोग, अन्य औद्योगिक प्रक्रियाओं तथा कुछ उपभोग संबंधी गतिविधियों के फलस्वरूप होने वाले उत्सर्जन वायु प्रदूषण के प्रत्यक्ष कारण हैं । इसके गहन कारणों के लिए नीतिगत, संस्थागत तथा विनियामक कमियों के साथ-साथ विशेष रूप से जीवाश्म ईंधन आधारित ऊर्जा का अकुशल मूल्य निर्धारण जिम्मेदार है । घरेलू वायु प्रदूषण, जो कि एक विशेष मामला है, महिलाओं के कमजोर सामाजिक स्तर के कारण होता है जिसके कारण प्रदूषणकारी व घटिया जैव सामग्री का चूल्हों में प्रयोग जारी रहता है । इसके अलावा कृषि रसायनों के लिए मूल्य निर्धारण नीतियों के कारण जैव सामग्री आधारित उर्वरकों की जगह रासायनिक उर्वरकों का उपयोग होने लगा है और इस तरह जैव सामग्री का ईंधन के तौर पर अपर्याप्त उपयोग किया जा रहा है । महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए नीतियों और कार्यक्रमों के माध्यम से तथा कृषि रसायनों के लिए मूल्य नीतियों के पर्यावरणीय प्रभावों पर विचार हेतु चर्चा के माध्यम से इन गंभीर कारणों पर भी ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित विशिष्ट कार्रवाई की जाएगी :

(क) परिवर्तन, संप्रेषण, वितरण और अंतिम उपयोग क्षमता तथा अनुसंधान-विकास गतिविधियों में सुधार करने तथा सतत ऊर्जा प्रौद्योगिकियों के प्रसार के लिए उपयुक्त प्रयास करते हुए ऊर्जा संरक्षण में एक एकीकृत दृष्टिकोण रखना तथा पनबिजली सहित सतत ऊर्जा प्रौद्योगिकियां अपनाना ।

(ख) जलौनी लकड़ी का उपयोग करनेवाले उन्नत चूल्हों तथा सौर कुकरों के प्रसार से संबंधित खाना पकाने के स्थानीय पद्धतियों और जैव संसाधनों के अनुरूप राष्ट्रीय कार्यक्रमों में तेजी लाना ।

(ग) पोइंट और गैरपोइंट दोनों स्रोतों से संबंधित उत्सर्जन मानकों की मानिटरी और प्रवर्तन को सुदृढ़ बनाना ।

23. उदाहरणार्थ, बहुत से कार्बनिक अपशिष्ट धाराओं का मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है यदि अंतर्ग्रहित किया जाए, किंतु उनका पौधों के लिए उर्वरक के रूप में महत्व है।

(घ) फिएट्स आधारित लिखतों के युक्तियुक्त संयोजन पर भरोसा करते हुए पोइंट और गैर पोइंट दोनों स्रोतों के वायु प्रदूषण से निपटने के लिए प्रमुख शहरों के लिए कार्य योजना तैयार व लागू करना।

(ड़) अल्प प्रदूषण वाली व्यापक परिवहन प्रणाली में पर्याप्त सार्वजनिक और निजी निवेश सुनिश्चित करने हेतु शहरी यातायात के लिए एक राष्ट्रीय कार्यनीति तैयार करना।

(च) भूमि के स्वामित्व का अधिकार प्राप्त स्थानीय समुदायों और निवेशकों को शामिल करके तथा बहु स्टेकहोल्डरों की भागीदारी के माध्यम से ग्रामीण ऊर्जा के लिए ऊर्जा पौधरोपण द्वारा परती भूमि के सुधार को बढ़ावा देना।

(छ) जैव ईंधन बागवानी और संगत अनुसंधान व विकास गतिविधियों को बढ़ावा देकर तथा नई प्रौद्योगिकियों को विनियामक प्रमाणन प्रक्रिया को युक्तियुक्त बनाकर जीवाश्म ईंधनों का जैव ईंधनों द्वारा आंशिक प्रतिस्थापन के प्रयासों को सुदृढ बनाना।

(ii) जल प्रदूषण

सतही प्रदूषण (नदी, नमभूमियां) जल स्रोतों, भू जल और तटीय क्षेत्रों के प्रदूषण के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कारणों की ऊपर चर्चा की गई है।

निम्नलिखित पैराओं में कार्य योजना के अन्य तत्व समाहित हैं:

(क) बहिस्राव और मल-जल शोधन संयंत्रों को स्थापित करने और प्रचालित करने के लिए सार्वजनिक-निजी सहभागिता माडल को शुरुआत में प्रायोगिक स्तर पर विकसित व लागू करना। एक बार माडलों के वैधीकृत होने पर, ऐसी सहभागिताओं की उत्प्रेरणा के लिए बाह्य सहायता सहित सार्वजनिक स्रोतों का प्रगामी उपयोग किया जाए। मल-जल प्रणालियों के प्रयोक्ता प्रभारों की वसूली हेतु नगरपालिकाओं की क्षमता को बढ़ाना।

(ख) जल प्रदूषण संबंधी मामलों पर ध्यान देने के लिए प्रमुख शहरों के लिए कार्य योजनाएं तैयार करना तथा उन्हें कार्यान्वित करना जिनमें फिएट्स और इंसेटिव आधारित साधनों के उपयुक्त मेल पर आधारित विनियामक प्रणालियां, नगरीय एवं औद्योगिक स्रोतों से उत्पन्न जलमल तथा अपशिष्ट जल को अंतिम रुप से जल निकायों में प्रवाहित करने से पूर्व जहां लागू हो, उनके शोधन, पुनः प्रयोग और पुनःचक्रण हेतु सार्वजनिक एजेंसियों तथा सार्वजनिक निजी सहभागिताओं के माध्यम से क्रियान्वित की गई परियोजनाएं शामिल हैं।

(ग) अन्य संसाधनों से विशेषकर भूमियों पर अपशिष्टों के निपटान से होने वाले प्रदूषण से जल निकायों को प्रदूषित होने से बचाने हेतु कदम उठाना।

(घ) राज्य और स्थानीय स्तर की सरकारों में स्पेटियल प्लानिंग के लिए क्षमताओं में वृद्धि करना ताकि लागत वसूली के आधार पर संचालित करने के लिए साझा बहिस्राव शोधन संयंत्रों की स्थापना के क्रम में प्रदूषक उद्योगों को समूहबद्ध करना सुनिश्चित किया जा सके तथा यह भी सुनिश्चित हो सके कि निवेश को सुविधाजनक बनाने और मानकों को प्रवर्तित करने के लिए साझा बहिस्राव शोधन संयंत्रों के संबंध में कानूनी इकाई की हैसियत उपलब्ध हो।

(ड) मल-जल शोधन के लिए विभिन्न पैमानों पर अल्प लागत प्रौद्योगिकियों के विकास हेतु अनुसंधान एवं विकास को बढ़ावा देना, विशेषकर विविध लाभ प्रदान करने के लिए मल जल शोधन के लिए पूर्वी कोलकाता की नमभूमियों और अन्य जैव परिशोधन आधारित माडलों की प्रतिकृति तैयार करना।

(च) कृषि संबंधी साधनों विशेषतया कीटनाशकों की मूल्य निर्धारण नीतियों के संदर्भ में भू-जल प्रदूषण को और कृषि विज्ञान पद्धतियों के प्रसार को स्पष्ट रूप से ध्यान में रखना। एकीकृत नाशी जीव प्रबंधन (आईपीम) तथा कीटनाशकों के प्रयोग को बढ़ावा देना।

(iii) मृदा प्रदूषण :

इसी प्रकार, मृदा प्रदूषण के तत्काल व गहन कारणों पर ऊपर विचार किया गया है। नगरीय अपशिष्ट तथा औद्योगिक अपशिष्ट दोनों का प्रबंधन मृदा प्रदूषण का एक प्रमुख कारण है और अपने परिमाण और आवश्यक संसाधनों के संदर्भ में यह एक बड़ी चुनौती है।

कार्ययोजना में निम्नलिखित शामिल होंगेः-

क) स्थानीय समुदायों की चिंताओं को ध्यान में रखते हुए औद्योगिक और जैवचिकित्सीय, दोनों तरह के विषैले और परिसंकटमय अपशिष्टों का प्रयोक्ताओं द्वारा भुगतान आधार पर शोधन और निपटान के लिए सुरक्षित लैंडफिल्स इंसिनरेटर्स और अन्य उपयुक्त तकनीकें स्थापित करने और उनसे प्रचालन हेतु सार्वजनिक- निजी सहभागिता के व्यवहारिक प्रारूपों को विकसित करना और उन्हें लागू करना। यदि गैर स्थानीय प्रयोक्ताओं को इसमें शामिल होने की इजाजत दी जाती है तो ऐसे स्थलों की होस्टिंग से प्राप्त होने वाले विशिष्ट लाभों में संबंधित स्थानीय समुदायों और राज्य सरकारों की स्पष्ट हकदारियां होनी चाहिए। विशेषकर औद्योगिक क्षेत्रों और बेकार खानों में विषाक्त और परिसंकटमय अवशिष्ट डंप लिगेसियो की सफाई के लिए तथा भविष्य में सतत उपयोग के लिए ऐसी भूमियों के सुधार हेतु कार्यनीतियां तैयार करना और उन्हें कार्यान्वित करना।

ख) विषाक्त और परिसंकटमय अपशिष्टों के डंपों की एक राष्ट्रीय सूचीकरण प्रणाली विकसित करना और सर्वेक्षण करना तथा परिसंकटमय अपशिष्टों के आवागमन के लिए ओनलाइन मानिटरी प्रणाली तैयार करना। विषाक्त और परिसंकटमय पदार्थ सामग्री के संबंध में मानिटरी और प्रवर्तन हेतु उत्तरदायी संस्थाओं की क्षमता को बढ़ाना।

ग) रसायनिक दुर्घटना शासन प्रणाली के भाग के रूप में परिसंकटमय अपशिष्टों के परिवहन, हथालन और निपटान से पैदा होने वाली आपात स्थिति का निराकरण करने हेतु कानूनी व्यवस्थाएं और प्रतिक्रियात्मक उपायों को सुदृढ़ बनाना।

घ) नगरपालिका ठोस अपशिष्टों का पृथक्करण, पुनः चक्रण और पुनः प्रयोग के लिए स्थानीय निकायों की क्षमताओं को सुदृढ़ करना। अन्य बातों के साथ-साथ सफाई कर्मचारियों के कल्याण पर पड़ने वाले संभावित सकारात्मक प्रभावों की पहचान करते हुए और विशेषकर ठोस अपशिष्ट प्रबंधन संबंधी बाह्य प्रतिस्पर्धा सेवाओं के माध्यम से सैनिटरी लैंडफिल्स स्थापित व प्रचालित करना।

(ङ) विभिन्न पदार्थों के एकत्रीकरण और पुनः चक्रण के अनौपचारिक क्षेत्र की प्रणालियों को वैधानिक मान्यता देना व सुदृढ़ बनाना, विशेषकर संस्थागत वित्त और सुसंगत प्रौद्योगिकियों में उनकी पहुंच बढ़ाना।

(च) पारंपरिक फसल की किस्मों की जैविक खेती को अनुसंधान के माध्यम से बढ़ावा देना और कृषि रसायनों का प्रयोग करके भूमि सुधार के लिए प्रौद्योगिकी का प्रसार, पारदर्शी, स्वैच्छिक, विज्ञान पर आधारित लेबलिंग स्कीमों के विकास को शामिल करके,भारत और विदेश में जैविक उपज[24] के विपणन को सुगम बनाना।

24. जैविक उपज के लिए उपयोक्ताओं की प्राथमिकता का महत्वपूर्ण प्रमाण मिला जो भरपूर प्रीमियम कमाण्ड कर सकता है।

(छ) जैव-अपक्षीणन और पुनःचक्रण योग्य प्रतिस्थानकों को गैर-जैव अपक्षीणक पदार्थों के रूप में उपयोग को बढ़ावा और संगत प्रौद्योगिकियों तथा प्रोत्साहन आधारित साधनों के माध्यम से उनके पुनःचक्रण, पुनःप्रयोग तथा अंत में पर्यावरणीय दृष्टि से बेहतर निपटान के लिए कार्यनीतियां बनाना और उन्हें कार्यान्वित करना।

(ज) देश में उत्सर्जित/आयातित इलेक्ट्रोनिक-अपशिष्टों के प्रबंधन के लिए पृथक विनियमन/दिशानिर्देश तैयार करना और लागू करना।

(झ) प्रोत्साहन देकर, बाधाओं को दूर करके तथा विनियमों द्वारा सामान्यतः गैर परिसंकटमय अपशिष्टों, जैसे; फ्लाई ऐश, बाटम ऐश, रेड मड और धातुमल, के अलावा सीमेंट और ईंट निर्माण तथा रेल और राजमार्गो के तटों के निर्माण के दौरान उत्पन्न गैर परिसंकटमय अपशिष्टों के लाभकारी उपयोग को बढ़ावा देना।

(iv) शोर प्रदूषण :

यह साबित हो चुका है कि निरंतर अधिक शोर के संपर्क में रहने से स्वास्थ्य पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । जहां कई मामलों में किसी खास ध्वनि का शोर के रूप में किया गया अभिनिर्धारण अन्य मामलों जैसे ''संगीत'' अथवा ''गीत गाना'' अथवा ''पटाखों'' का प्रदर्शन आदि में भी स्पष्ट हो जाता है लेकिन यह सहज रूप से एक स्वानुभूति का मामला है। ऐसे सभी मामलों में समाज की बेहतरी के लिए यह अपेक्षित होगा कि तीसरे पक्ष के लिए एक्सपोजर स्तरों को स्वास्थ्य पर अधिक दुष्प्रभाव डालने के स्तरों से कम पर रखा जाए। साथ ही साथ यह भी समझना चाहिए कि कतिपय पर्यावरणों में, जिनमें लोग रहना पसंद करते हैं , अवश्य ही कुछ हद तक शोर होता है।

ध्वनि प्रदूषण के उपशमन संबंधी कार्य योजना के तत्व निम्नलिखित हैं :-

(क) परिवेशी ध्वनि मानकों को स्थापित करने के संदर्भ में विभिन्न पर्यावरणों अर्थात ग्रामीण बनाम शहरी, शैक्षिक और चिकित्सकीय प्रतिष्ठान बनाम अन्य क्षेत्र, रिहाइशी इलाकों में रात्रि का समय बनाम दिन का समय, सड़कों, रेल मार्गों, हवाई अड्डों तथा संरक्षित क्षेत्रों आदि के आस- पास के क्षेत्रों के पर्यावरणों में उपयुक्त अंतर रखना।

(ख) तृतीय पक्ष के लिए व्यावसायिक एक्सपोजर (सुरक्षा उपायों के साथ) तथा पर्यावरणीय एक्सपोजर के संदर्भ में ध्वनि मानकों में अंतर करना

(ग) विविध गतिविधियों के लिए उपयुक्त ध्वनि उत्सर्जन मानक (उदाहरणतः ध्वनिविस्तारक (लाउड स्पीकर), वाहनों के हार्न, पटाखों की रेटिंग) तैयार करना ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि तीसरे पक्ष जो गतिविधि में शामिल नहीं है, के लिए ध्वनि प्रदूषण का स्तर निर्धारित परिवेशी मानकों से अधिक न हो। ध्वनि प्रदूषण का संपर्क स्तर निर्धारित परिवेशी मानदंडों से आगे नहीं बढ़ता है।

(घ) परिवेशी ध्वनि को शहरी क्षेत्रों में नियमित रूप से मानिटर किए जाने वाले पर्यावरणीय गुणवत्ता के प्राचलों के अंतर्गत लाना।

(ङ) अस्थायी तौर पर परिवेशी ध्वनि मानकों से अधिक ध्वनि होने के मामले में तथा ध्वनिविस्तारकों/पटाखों आदि के इस्तेमाल, के क्रम में प्रवर्तनीय समय अवधि के अंगीकरण हेतु राज्य/स्थानीय प्राधिकारियों और धार्मिक समुदायों के प्रतिनिधियों के बीच वार्ता को प्रोत्साहित करना, क्योंकि परंपरागत धार्मिक/सांस्कृतिक/सामाजिक समारोह मनाने को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

5.2.9 मानव निर्मित धरोहर का संरक्षण :

मानवनिर्मित धरोहर लोगों की प्रागैतिहासिक, एतिहासिक, उनके रहने के ढंग और संस्कृति आदि को परिलक्षित करती है। भारत के मामले में, ऐसी धरोहर हमारी राष्ट्रीय पहचान के केंद्र हैं । इसके साथ ही, मानवनिर्मित धरोहर के संरक्षण से पर्याप्त आर्थिक मूल्य और आजीविका प्राप्त की जा सकती हैं और उनकी पर्यटन क्षमता के माध्यम से उनका सतत उपयोग किया जा सकता है।

धरोहर स्थलों की पहचान की प्रक्रियाओं के लिए मानदंड के साथ-साथ कानून और वित्तीय उपाय, यह सुनिश्चित करने के लिए कि उन्हें क्षति न पहुंचाई जाए अथवा प्रत्यक्ष मानवीय हस्तक्षेप से उनमें परिवर्तनन किया जाए, राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के कार्यक्षेत्र से बाहर हैं । तथापि, उनके संरक्षण पर पर्यावरणीय गुणवत्ता का प्रभाव पर्यावरणीय नीति से संबंधित है । धरोहर स्थल प्रदूषणों द्वारा प्रभावित हो सकते हैं अथवा उन्हें विकास परियोजनाओं द्वारा नुकसान अथवा तबदीली के खतरों का सामना करना पड़ सकता है । अनेक प्रसिद्ध धरोहर स्थलों को '' अतुलनीय मूल्यों '' के लिए बनाए रखा जा सकता है।

निम्नलिखित कार्य बिंदुओं पर ध्यान दिया जाएगा :

(क) परिवेशी पर्यावरणीय मानक विशेषकर जल गुणता संबंधी मानक स्थापित करते समय नामोद्दिष्ट धरोहर स्थलों पर पड़ने वाले प्रभावों पर ध्यान रखा जाना चाहिए।

(ख) ''अतुल्य महत्व'' के धरोहर स्थलों के अन्यथा रूप से तुलनात्मक स्थितियों की अपेक्षा अधिक कड़े मानक अपेक्षित हैं और उनके मामलों में मानिटरी और पर्यावरणीय पवर्तन की दृष्टि से विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। एकीकृत क्षेत्रीय विकास योजनाएं तैयार की जानी चाहिए जिनमें स्थानीय समुदायों की भागीदारी हो ताकि प्रदूषण गतिविधियों को अन्यत्र हटाया जा सके अथवा उन्हें कम प्रदूषक बनाया जा सके। इसके अलावा अपशिष्ट धाराओं का उपचार, परिवहन विकल्पों की समीक्षा तथा भवन निर्माण संबंधी मानकों को अंगीकृत करना जो क्षेत्र के समग्र धरोहर परिवेश को बनाए रखते हैं।

(ग) राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के उद्देश्यों और सिद्धांतों के अनुरूप अधिनियमित धरोहर स्थलों के प्रभावों का परियोजनाओं के पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकनों से संबंधित विकासीय संदर्भ के स्तर पर अवश्य विचार किया जाए और मूल्यांकन के दौरान संभावित प्रभावों पर विचार किया जाए।

5.2.10 जलवायु परिवर्तन :

जलवायु परिवर्तन, गैसों के समूह के मानवजनित उत्सर्जनों से होता है (इन्हें हरितगृह (ग्रीनहाउस) गैसें कहा जाता है)। जीवाश्म ईंधन उपयोग के कारण कुछ कृषि और औद्योगिक गतिविधियों और वनों की कटाई होने से वायुमंडल में अधिक सांद्रण हो जाते हैं और इसका प्रभाव आगे आने वाली पीढ़ियों पर होगा और पूरे विश्व की जलवायु पर्याप्त रूप से बदल जाएगी । इससे पारि प्रणाली में अधिक परिवर्तन होंगे, और आजीविका, आर्थिक गतिविधि, जीवन यापन की स्थितियां और मानव स्वास्थ्य में विकृति होने की संभावना हो जाएगी । दूसरी ओर हरितगृह गैसों की रोकथाम करने में अत्यधिक आर्थिक लागत आएगी।

यद्यपि जलवायु परिवर्तन एक भूमंडलीय पर्यावरणीय मु÷ा है लेकिन वायुमंडलीय हरितगृह गैसों के सांद्रणों में वृद्धि के लिए भिन्न-भिन्न देशों की अलग-अलग उत्तरदायिता है । इसके अलावा जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव अनुपयुक्त रूप से उन पर पड़ेंगे जो इस समस्या के कारणों के लिए बहुत कम जिम्मेदार हैं, जिसमें भारत भी शाामिल है।

भारत का हरितगृह गैस उत्सर्जन 1994 में 1228 मिलियन टन (एम टी) CO2 के बराबर था,[25] जो भूमंडलीय हरितगृह गैस उत्सर्जनों के 3 प्रतिशत से कम है, पर प्रति व्यक्ति की दर से यह भूमंडलीय औसत का 23 प्रतिशत है और संयुक्त राज्य अमरीका का 4 प्रतिशत है, जर्मनी का 8 प्रतिशत, यू के का 9 प्रतिशत है और जापान का 1994 में प्रति व्यक्ति उत्सर्जन 10 प्रतिशत था। अर्थव्यवस्था की ग्रीन हरितगृह तीव्रता की दृष्टि से खरीद शक्ति समानता शर्तों में भारत ने 0.4 टन CO2 से मामूली अधिक उत्सर्जन किया है जो 2002 में प्रति 1000 अमरीकी डालर के समकक्ष हैं, जो भूमंडलीय औसत से कम है । प्राथमिक ऊर्जा उपयोग के संदर्भ में भारत की सतत ऊर्जा का हिस्सा (गैर हरितगृह गैस होते हुए ऊर्जा के रूप में छोड़ना) 36 प्रतिशत है जो कई दशकों में औद्योगिक देशों द्वारा प्राप्त किए जाने के स्तर के कहीं अधिक है । चूंकि हरितगृह गैसों का उत्सर्जन सीधे रूप में आर्थिक गतिविधि से संबंधित है, इसलिए भारत की आर्थिक वृद्धि से हरितगृह गैसों के इस समय के सबसे न्यून स्तरों से अवश्य ही वृद्धि होगी। भारत द्वारा हरितगृह गैसों के उत्सर्जन से संबंधित किसी तरह के प्रतिबंधों, चाहे प्रत्यक्ष रूप से हों अथवा उत्सर्जन के लक्ष्यों द्वारा हों, उनसे हरितगृह गैस की वृद्धि दर में कमी हो जाएगी।

दूसरी ओर, सतत विकास के लिए भारत की नीतियां, ऊर्जा की कार्यकुशलता को बढ़ावा देकर, ईंधन और नाभिकीय, जल विद्युत और नवीकरणीय स्रोतों, ऊर्जा मूल्यनिर्धारण, प्रदूषण उपशमन, वनीकरण, वृहत परिवहन सहित प्राथमिक ऊर्जा स्रोत के उपयुक्त मिश्रण के साथ-साथ विनिर्माण से तुलना करने पर न्यून ऊर्जा गहन सेवा क्षेत्रों के भिन्न-भिन्न ऊंची वृद्धि दर पर सापेक्षिक रूप से हरितगृह गैसों के सुसाध्य वृद्धि पथ पर अग्रसर होगी।

मानवजनित जलवायु परिवर्तन जिसका महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व भारत और अन्य विकासशील देशों पर स्पष्ट रूप से नहीं पड़ता, दूसरी और इन पर प्रतिकूल प्रभाव भार के प्रेसिपिटेशन पैटर्नों, पारि-प्रणाली, कृषि संभाव्यता, वनों, जल संसाधनों, तटीय और नौवाहन संसाधनों पर पड़ने की संभावना है और इसके अलावा अनेक रोगों के रोग वाहकों की सीमा में वृद्धि होती है यदि मानवीय तकलीफ की त्रासदी से बचाव करना है तो बड़े पैमाने पर जलवायु परिवर्तन प्रभावों के अंगीकरण उपायों हेतु स्पष्टतः संसाधनों की जरूरत होगी।

तदनुसार, जलवायु परिवर्तन पर ध्यान देने संबंधी भारत के दृष्टिकोण में निम्नलिखित अनिवार्य तत्वों को शामिल किया जाएगा :-

25 भारत का जलवायु परिवर्तन संबंधी (यू-एनएफसीसीसी) संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन 2004 के लिए प्रारंभिक राष्ट्रीय संचार।

(क) हरितगृह गैसों को कम करने और अंगीकरण उपायों के संबंध में विभिन्न देशों के भिन्न-भिन्न उत्तरदायित्वों और संबंधित क्षमताओं के साथ सामान्य सिद्धांत प्रतिबद्धता।

(ख) बउहुद्देशीय दृष्टिकोण पर निर्भरता द्विपक्षीय अथवा बहुपक्षीय अथवा एकपक्षीय उपायों की तुलना में बहुउद्देशीय दृष्टिकोणों पर निर्भरता।

(ग) सभी देशों के मामले में भूमंडलीय पर्यावरणीय संसाधनों में प्रति व्यक्ति समान हकदारियां।

(घ) विकास के अधिकार को तत्काल प्राथमिकता।

(ड़) जल संसाधनों, वनों, तटीय क्षेत्रों कृषि और स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों के विशेष संदर्भ में भारत की प्रमुख जलवायु संबंधी संवेदनशीलताओं की पहचान करना।

(च) भविष्य के जलवायु परिवर्तनों के साथ अनुकूलन की आवश्यकता तथा इन परिवर्तनों को संगत कार्यक्रमों, जिनमें जलग्रहणक्षेत्र प्रबंधन, तटीय क्षेत्र आयोजना और विनियमन, वानिकी प्रबंधन, कृषि प्रौद्योगिकियां और प्रक्रिया तथा स्वास्थ्य कार्यक्रमों आदि शामिल हैं, के साथ जोड़ने की संभाव्यता का मूल्यांकन करना।

(छ) स्वच्छ विकास तंत्र प्रक्रिया में भाग लेने हेतु वित्तीय क्षेत्र की परियोजनाओं सहित स्वच्छ विकास परियोजना तंत्र परियोजनाओं की पहचान करके उन्हें तैयार करने हेतु भारतीय उद्योग को प्रोत्साहित करना।

(ज) जलवायु परिवर्तन पर यू एन फ्रेमवर्क कन्वेंशन के प्रावधानों के साथ संगत सतत विकास और जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का सामना करने के लिए अन्य देशों जिसमें विकसित और विकासशील देश शामिल है, के साथ स्वैच्छिक साझेदारी में सम्मिलित होना।

5.3 पर्यावरणीय मानक, प्रबंध प्रणालियां, प्रमाणीकरण और संकेतक

5.3.1 पर्यावरणीय मानक:-

पर्यावरणीय मानक स्थानों की विभिन्न श्रेणियों पर (परिवेशी मानक) और विभिन्न गतिविधियों के वर्गों द्वारा (उत्सर्जन मानक) विशिष्ट अपशिष्ट धारा की निकासी के अनुमत स्तरों, दोनों के विशिष्ट पर्यावरणीय गुणता प्राचलों से संबंध रखते हैं।

अब यह भली प्रकार से समझा जा चुका है कि पर्यावरणीय मानक सार्वभौमिक नहीं हो सकते और प्रत्येक देश को अपनी राष्ट्रीय प्राथमिकताओं, नीति उद्देश्य और संसाधनों के संदर्भ में मानक स्थापित करने चाहिए। ये मानक किसी देश के विकास क्रम के अनुसार भिन्न-भिन्न (सामान्यतः और अधिक सख्त) हो सकते हैं और पर्यावरणीय प्रबंधन के लिए प्रौद्योगिकियों और वित्तीय संसाधनों में पर्याप्त महत्व रखते हैं। हालांकि देश के अंदर, विभिन्न राज्य, संघ शासित प्रदेश और स्थानीय निकाय, स्थानीय कड़े मानदंड अपना सकते हैं लेकिन उन्हें इस नीति के प्रावधानों का सख्ती से अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय सरकार की सहमति अपेक्षित होगी । देश में खतरे को कम करने के लिए पर्यावरणीय मानकों को अन्य उपायों के साथ सम्बद्ध करने की जरूरत है ताकि समग्र जोखिम को कम[26] करने का लक्ष्य प्राप्त करने हेतु संसाधनों की सामाजिक प्रतिबद्धता से जोखिम में अधिकतम कमी की जा सके।

26 सामाजिक जोखिम का एकमात्र स्रोत पर्यावरणीय गुणवत्ता ही नहीं हैः मानव की प्रत्येक गतिविधि जोखिम से भरी हुई है। नियमित किए जा सकने वाले जोखिम के अन्य स्रोतों में वाहनों, वायुयान, जल, भोजन तथा दवाएं, संक्रामक बिमारियों (संगरोध एवं प्रतिरक्षण) आदि के लिए सुरक्षा मानक शामिल हैं। जोखिम न्यूनीकरण के प्रत्येक मामले में सामाजिक लागतें शामिल हैं। इसकी तुलना संभाव्य लाभों के प्रति की जानी चाहिए।

स्थान की प्रत्येक श्रेणी (रिहायशी, औद्योगिक, पर्यावरणीय संवेदनशील क्षेत्र, आदि) के संबंध में परिवेशी मानकों को निर्धारित करने के लिए विशिष्ट विचारणीय बातों में संपर्क में आने वाली आबादी के संपूर्ण स्वास्थ्य जोखिम (रुग्णता और मर्त्यता को एकल उपाय में शामिल करके)[27] संवेदनशील, महत्वपूर्ण पारितंत्र और मानव निर्मित संपत्तियां और प्रस्तावित परिवेशी मानक प्राप्त करने के लिए संभावित सामाजिक लागतें शामिल हैं।

इसी प्रकार, प्रत्येक श्रेणी की गतिविधि के उत्सर्जन मानक अपेक्षित प्रौद्योगिकियों [28] की सामान्य उपलब्धता के आधार पर निर्धारित करने, संबंधित स्थान पर (विशिष्ट अथवा श्रेणी) लागू पर्यावरणीय गुणवत्ता मानकों को प्राप्त करने की संभाव्यता और प्रस्तावित मानकों को पूरा करने की संभावित इकाई लागत को स्थापित करने की जरूरत है। यह भी महत्वपूर्ण है कि मानक मात्रा और प्रदूषकों की दृष्टि से विशिष्टीकृत हो, जो उत्सर्जित किए जा सकें और न कि सांद्रण स्तरों पर हों चूंकि परिवेशी गुणवता में वास्तविक सुधार किए बिना परवर्ती को घुलन के माध्यम से परिवेशी गुणवता में वास्तविक सुधार किए बिना प्रायः सरलता से पूरा किया जा सकता है।

विशिष्ट रोकथाम प्रौद्योगिकियों को निर्धारित करने की प्रवृति से भी परहेज करना चाहिए चूंकि ये परिवेशी पर्यावरणीय गुणवत्ता को प्राप्त करने की यूनिट और सामाजिक लागत को अनावश्यक रूप से बढ़ा सकते हैं क्योंकि एक प्रोद्योगिकी जिसे दिए गए उत्सर्जन मानकों को पूरा करने के लिए आदर्श माना जाता है वह सामाजिक जोखिम के अन्य संभावित स्रोतों सहित अन्य संबद्ध प्राचलों के संबंध में स्वीकार्य नहीं हो सकती।

निम्नलिखित विशिष्ट कार्रवाई की जाएगीः-

(क) अधिसूचित परिवेशी और उत्सर्जन मानकों को नई वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय सूचना, उनके उपलब्ध होने, और बदलते राष्ट्रीय हालातों की समीक्षा करने के लिए सभी संबंधित विषयों के विशेषज्ञों की स्थायी समिति का गठन करना ताकि संभावित प्रभावकारी समुदायों और उद्योग संघों द्वारा पर्याप्त सहभागिता सुनिश्चित की जा सके।

(ख) परिवेशी पर्यावरण गुणता की मानीटरी करने के लिए नेटवर्क को सुदृढ़.बनाना जिसमें स्थानीय समुदायों और सार्वजनिक निजी भागीदारी की सहभागिता का माध्यम शामिल है। मानीटरी आंकड़ों का वास्तविक समय और ओन-लाइन उपलब्धता को प्रगामी रूप से सुनिश्चित करना।

5.3.2 पर्यावरणीय प्रबंधन प्रणालियां, ईकोलेबलिंग और प्रमाणीकरण :-

मानकीकृत पर्यावरणीय प्रबंधन प्रेक्टिसों का अंगीकरण, उनके वास्तविक उपायों का प्रलेखन और इस वास्तविकता का तीसरे पक्षकार द्वारा सत्यापन की शर्त द्वारा आई एस ओ 14000 जैसी पर्यावरणीय प्रबंधन प्रणालियां, निर्धारित उत्सर्जन मानकों की मानीटरी और प्रवर्तन करने हेतु सरकारी बोझ को काफी कम कर सकती है। दूसरी ओर, उन्हें अंगीकार करने से समव्यावहारिक (ट्रांसेक्शन) लागत हो सकती है जो कि छोटे और मझौले उद्यमियों द्वारा किए गए कुल निवेश के मुकाबले में काफी अधिक हो सकती है। तथापि, पर्यावरणीय प्रबंधन प्रणालियों [29] का विश्वव्यापी तालमेल, गैर-शुल्क दरों के रूप में काम करने वाली निरंकुश राष्ट्रीय पर्यावरणीय प्रबंधन प्रणालियों के अंगीकरण के विपरीत एक सुरक्षोपाय है।

---

27 उदाहरणार्थः ''डिसेबिलिटी एंड जस्टिड लाइफ ईयर्स'' (डी ए एल वाई)।

28 विशेषकर अनेक वेंडरों से तकनीकों के विकल्प उपलब्ध हो जिससे विनिर्माताओं के छोटे समूह को अप्रत्याशित लाभ न हो, और परिणामतः प्रौद्योगिकियों की उच्च लागतें हों।

29. तथापि, ई एम एस का विश्वव्यापी सामंजस्य राष्ट्रीय उपलब्धियों से संबंधित है तथा बाहर से थोपे गए उत्सर्जन मानकों से नहीं।

इकोलेबलिंग (और अन्य स्वैच्छिक प्रमाणन मेकेनिज्म) पर्यावरणीय प्रबंधन प्रणालियों से भिन्न है इसमें राष्ट्रीय पर्यावरणीय मानकों का अनुपालन सुनिश्चित करने के बजाए पर्यावरणीय तौर पर सचेत उपभोक्ताओं की पसंद को ध्यान में रखते हैं, इनमें कच्ची सामग्री का पता लगाने से लेकर अंतिम निपटान तक सम्पूर्ण उत्पाद चक्र की समीक्षा शामिल हो सकती है । चूंकि वे मुख्य रूप से उपभोक्ताओं की पसंद से संबद्ध होते हैं इसलिए वे राष्ट्रीय पर्यावरणीय मानकों की अपेक्षा बाह्य अथवा तदर्थ मानकों से संबंध रखते हैं । इसके अतिरिक्त, वर्तमान में गैर-सरकारी निकायों ने वैज्ञानिक ज्ञान के प्रमाण अथवा संभवतः प्रभावित उत्पादकों की भागीदारी के बिना भारत के निर्यात केन्द्रों में कई लेबलिंग स्कीमें स्थापित की हैं। इसके अलावा, वे न केवल उत्पाद अभिलक्षणों, बल्कि उत्पादन प्रक्रियाओं के निर्देशों पर आधारित हो सकते हैं और इसी कारणवश उनका अनिवार्य अनुप्रयोग विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू टी ओ) रिजीम के प्रावधानों के अनरूप है ।

इकोलेबल आदि में स्पष्ट रूप से व्यापार बाधाओं के रूप में प्रयोग किए जाने की क्षमता है। निर्यात गंतव्यों में कम से कम प्रतियोगी कंपनियों द्वारा स्वयं ही, यदि प्रत्यक्ष रूप से उनकी सरकारों द्वारा नहीं। इकोलेबल विशेषकर ऐसे इकोलेबल, जिसे किसी विकसित देश में स्थित एजेंसी द्वारा मंजूर किया गया हो, को प्राप्त करने में भारी लागत की जरूरत होगी । तथापि, इकोलेबल वाले उत्पाद महत्वपूर्ण प्राइस-प्रीमिया वाले हो सकते हैं और इसके बाजारों में प्रवेश करने में आसानी होगी । दूसरी ओर, भारत में ही व्यापक, तेजी से बढ़ रहे पर्यावरणीय रूप से जागरूक उपभोक्ता आधार इकोलेबलिंग योजनाओं के परस्पर मान्यता से महत्वपूर्ण लाभ प्राप्त करने के लिए अपेक्षित लीवरेज प्रदान कर सकता है।

निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगीः

(क) उद्योग संघों को अपने सदस्यों को तकनीकी और प्रशिक्षण समर्थन के प्रावधान के माध्यम से आई एस ओ 14000 के अंगीकरण को प्रोत्साहित करने हेतु प्रोत्साहित करना । इस सेक्टर के लिए विभिन्न प्रोत्साहन स्कीमों में लघु क्षेत्र में आई एस ओ 14000 के उन्नयन को युक्ति संगत बनाना ।

(ख) आई एस ओ 14000 माल और सेवाओं के लिए किसी भी दिए गए समय पर लघु उद्योग क्षेत्र के लिए आरक्षित मदों को छोड़ कर सरकारी खरीद की वरीयता के माध्यम से पर्यावरणीय प्रबंधन प्रणालियों के अंगीकरण को प्रोत्साहित करना । आई एस ओ 14000 को अनिवार्य तभी किया जाए जब प्रत्येक सामान अथवा सेवा संबंधी घरेलू आपूर्तिकर्ताओं की पर्याप्त संख्या के पास आई एस ओ 14000 का प्रमाणन[30] हो ।

(ग) इकोलेबल्स के लिए "बेहतर पद्धति दिशा-निर्देश" उनके वैज्ञानिक आधार, पारदर्शिता और सहभागिता की अपेक्षाओं में वृद्धि करने के लिए तैयार किए जाएं । भारतीय और विदेशी इकोलेबलों की परस्पर मान्यता को संवर्धित करने, जो बेहतर पद्धति दिशा-निर्देशों की अनुपालना करते हों, को बढ़ावा दिया जाए ताकि भारतीय निर्यातक कम कीमत पर निर्यात को बढ़ावा दे सकें ।

30. यहां तक कि वे फर्में जो अपने उत्पादन का केवल एक भाग सरकार को बेचती हैं और उनसे भी आई एस ओ 14000 प्रमाणन प्राप्त करने की आशा की जा सकती है चूंकि उनके लिए प्रमाणित और गैर प्रमाणित उत्पादों के संबंध में उनके लिए अलग-अलग उत्पादन लाइनों का रख-रखाव कर पाना लागत प्रभावी नहीं होगा ।

(घ) सभी संबंधित क्षेत्रों में ''उत्तम पद्धति'' मानदंडों को बढ़ावा देना ताकि प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित किया जा सके और प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों को कम किया जा सके जिससे स्थलीकरण, सामग्री का चयन, उपयुक्त ऊर्जा किफायत का उपयोग और नवीकृत ऊर्जा विकल्पों का उपयोग तथा ठोस अपशिष्ट उत्पादों और मल-जल हथालन, गैसीय उत्सर्जन और ध्वनि का निराकरण हो सके।

5.4 स्वच्छ प्रौद्योगिकियां और नवीनीकरण

स्वच्छ प्रौद्योगिकियां ''अंतिम तौर पर'' रोकथाम वाली प्रौद्योगिकियों से विशिष्ट हैं जो उत्पादन प्रक्रियाओं में ही अपशिष्ट प्रवाहों के सृजन को कम करती हैं और अन्य उत्पादक प्रक्रियाओं से उत्पन्न अपशिष्टों का उपयोग करती हैं, न कि अपशिष्ट को सृजन के बाद इसका शोधन करती हैं। सामान्य तौर पर स्वच्छ प्रौद्योगिकियां कच्चे माल और ऊर्जा के उपयोग में प्रौद्योगिकियों की अपेक्षा कम गहनता वाली होती हैं, जो सृजन होने के बाद प्रदूषण की रोकथाम पर निर्भर करती हैं। इस कारण, वे उत्पादकर्ता को महत्वपूर्ण लागत लाभ भी प्रदान कर सकती है।

स्वच्छ प्रौद्योगिकियों के अंगीकरण के लिए पहले तो सीमाओं को बांधना होगा जिसकी वास्तविकता तो यह है कि उनमें से अनेक मालिकाना हक वाली हैं और विदेशों में मजबूत पेटेंट किए गए क्षेत्र द्वारा सुरक्षित है। तदनुसार, इस में संलिप्त कारोबारी प्रतिस्पर्द्धात्मक विकल्पों की अनुपस्थिति में अधिक लाभ लेने में सक्षम हो सकते हैं। दूसरी बात यह है कि स्वच्छ प्रौद्योगिकियों की मौजूदा उत्पादन सुविधाओं को शुरू करने के लिए प्रस्तावों के मूल्यांकन हेतु वित्तीय संस्थाओं के विकास की क्षमता में कमी होना है। तीसरी बात, भारत में अनुसंधान और विकास प्रयासों के समन्वय में कमी होना है जिनका लक्ष्य वाणिज्यिक रूप से आत्मनिर्भर स्वच्छ प्रौद्योगिकियों का एक समूह विकसित करना है। अंत में, इस वास्तविकता पर भी यह ध्यान देने की जरूरत है कि भविष्य में समूची वाणिज्यिक उत्पादन प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण पूरे विश्व में स्वच्छ प्रौद्योगिकियों के लिए हो।

निम्नलिखित में कार्य योजना के तत्व समाहित होंगे :-

(क) स्वच्छ प्रौद्योगिकी परियोजना स्विच ओवर प्रस्तावों का मूल्यांकन करने के लिए वित्तीय क्षेत्र में क्षमता निर्माण को प्रोत्साहित करना।

(ख) देश में सार्वजनिक और निजी प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थानों का नेटवर्क का तंत्र स्थापित करना ताकि प्रौद्योगिकी अनुसंधान और विकास में सहयोग हो सके और स्वच्छ प्रौद्योगिकियों का अंगीकरण, सूचना और मूल्यांकन किया जा सके। ऐसी प्रौद्योगिकियों का एक डाटाबेस तैयार करना और भारत और विदेश में विकसित नई प्रौद्योगिकियों के प्रसार को बढ़ावा देना।

(ग) मौजूदा और नई इकाइयों, दोनों में स्वच्छ प्रौद्योगिकियां अपनाने को बढ़ावा देने के लिए राजस्व संवर्धक राजकोषीय साधनों के प्रयोग पर विचार करना।

(घ) विनियामक राजकोषीय कदम उठाकर और मानक निर्धारित करके उद्योगों को, विशेषकर छोटे उद्योगों को, स्वच्छ प्रौद्योगिकियां अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना।

5.5 पर्यावरणीय जागरूकता, शिक्षा और सूचना

व्यक्तिगत व्यवहार के पैटर्नों का पर्यावरण संरक्षण की अपेक्षाओं के साथ तालमेल बैठाने के लिए पर्यावरणीय जागरूकता बढ़ाना अनिवार्य है । इससे मानीटरी और प्रवर्तन क्षेत्रों में रखी गई मांगों में कमी आएगी, वस्तुतः बड़े पैमाने पर अननुपालन से सामान्यतः कोई भी व्यावहारिक विनियामक मशीनरी प्रभावित हो सकती है । जागरूकता आम जनता के साथ-साथ विशिष्ट वर्गों, उदाहरण के तौर पर युवाओं, किशोरों, शहरियों, औद्योगिकी और विनिर्माण मजदूरों, नगर पालिका और अन्य सार्वजनिक कर्मचारियों आदि से भी संबंध रखती है । इस जागरुकता के अन्तर्गत न केवल पर्यावरणीय दृष्टि से उचित व्यवहारों बल्कि गैर जिम्मेदाराना क्रियाकलापों वे दुष्प्रभावों के बारे में सूझबूझ पैदा करना भी है जिसमें जनस्वास्थ्य, जीवन निर्वाह स्थितियां, साफ-सफाई तथा आजीविका आदि विषय भी शामिल हैं ।

आम जनता और लक्षित समूहों में इस प्रकार की जागरूकता को बढ़ाने के लिए पर्यावरणीय शिक्षा एक प्रमुख साधन है । ऐसी शिक्षा औपचारिक अथवा अनौपचारिक अथवा दोनों का मिलाजुला रूप हो सकती है । इसके लिए विभिन्न स्तरों पर शिक्षा संस्थाओं, प्रिन्ट, इलेक्ट्रानिक अथवा लाइव मीडिया और अन्य विभिन्न औपचारिक तथा अनौपचारिक संस्थाओं की सहायता ली जा सकती है । पर्यावरण जागरुकता और शिक्षा कार्यक्रमों की विषय वस्तु को विस्तारित करने के लिए विभिन्न कदम उठाए गए हैं । सर्वोच्च न्यायालय ने भी अधिदेश दिया है कि औपचारिक प्रणाली में उच्च शिक्षा सहित सभी स्तरों पर पर्यावरणीय शिक्षा शामिल की जाए। तथापि, मौजूदा कार्यक्रमों को और अधिक सुदृढ़ बनाने और उन्हें अंतर्विष्ट और सहभागिता योग्य बनाए जाने की आवश्यकता है ।

पर्यावरणीय सूचना प्राप्ति की सुलभता एक ऐसा प्रमुख माध्यम हैं जिसके द्वारा पर्यावरण की दृष्टि से सजग हितधारक संबंधित पक्षकारों के पर्यावरणीय मानकों, कानूनी आवश्यकताओं और प्रसंविदाओं के अनुपालन की स्थिति का मूल्यांकन कर सकते हैं ।

पर्यावरणीय सूचना प्राप्ति की सुलभता एक ऐसा प्रमुख माध्यम है जिसके द्वारा पर्यावरण की दृष्टि से सजग हितधारक संबंधित पक्षकारों के पर्यावरणीय मानकों, कानूनी आवश्यकताओं और प्रसंविदाओं के अनुपालन की स्थिति का मूल्यांकन कर सकते हैं । इसके फलस्वरूप वे आवश्यक प्रवर्तन कार्रवाई के माध्यम से अनुपालन में और तेजी लाने में सक्षम हो सकेंगे । विकास परियोजनाओं के पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकनों और पर्यावरण प्रबंधन योजनाओं को तैयार करने जैसी विभिन्न परामर्शक प्रक्रियाओं में पर्याप्त रूप से प्रभावित होने वाली जनता की प्रभावी और सार्थक सहभागिता को सुनिश्चित करने की दृष्टि से भी सूचना उपलब्ध कराना आवश्यक है ।

दूर संवेदी और पारंपरिक तकनीकों के युक्तियुक्त मिश्रित प्रयोग से देश के प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण के इष्टतम प्रबंध के लिए 1983 में राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन प्रणाली स्थापित की गई थी । दूर संवेदी और उपग्रही और हवाई डाटा, दोनों को पिछले तीन दशकों से प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण के मानचित्रण और प्रबंधन के लिए व्यापक रूप से प्रयोग में लाया जा रहा है ।

निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगीः-

(क) प्रमुख पर्यावरणीय संसाधनों और पैरामीटरों, जिनमें परिवेशी गुणवत्ता, और प्रदूषण के प्रमुख बिंदु स्रोत शामिल है, के संबंध में सभी तरह की जानकारियां प्रदान करने के लिए एक आन लाइन, वास्तविक कालिक (रियल टाइम) तथा सार्वजनिक रूप से सुलभ पर्यावरणीय सूचना प्रणाली विकसित करना और प्रचालित करना तथा एक सुविधाजनक प्रारूप में पुरातत्व अभिलेख उपलब्ध कराना।

(ख) वनों, वन्यजीव पर्यावासों, जैव-विविधता, परती भूमियों, आर्द्रभूमियों, भूमिगतजल, मरुस्थलों, नदियों आदि के विस्तार क्षेत्र और गुणवत्ता आदि के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारियां उपलब्ध कराना और प्रदूषण और उसके प्रभावों की मानीटरी के लिए दूर संवेदी डाटा के प्रयोग को और अधिक बढ़ावा देना।

(ग) प्राथमिक, माध्यमिक, तृतीयक और व्यावसायिक स्तरों पर औपचारिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में मुख्य धारा वाले वैज्ञानिक रूप से वैध पर्यावरण विषयवस्तु को रखा जाए जिसमें प्रत्येक स्तर पर विषयवस्तु पर उपयुक्त ध्यान दिया जाए और समूचे पाठ्यक्रम बोझ को न बढ़ाया जाए, विशेष मिड-कैरियर प्रशिक्षण कार्यक्रम विशेष दायित्वों वाले समूहों अर्थात न्याय पालिका, नीति निर्माता, विधायकों, औद्योगिक प्रबंधकों, शहरी और क्षेत्रीय नियोजकों, स्वैच्छिक और समुदाय आधारित संगठनों के लिए आयोजित किए जाएं।

(घ) व्यावसायिक उत्पादन द्वारा और विभिन्न लक्षित समूहों को सहायता प्रदान करने वाले विविध मीडिया के माध्यम से सूचना उत्पादों के प्रसारण द्वारा आम जनता और विशेष समूहों में पर्यावरणीय जागरूकता बढ़ाने हेतु एक कार्यनीति तैयार करना और उसे कार्यान्वित करना। मीडिया उत्पाद, जहां तक संभव हो सके सार्वजनिक एजेंसियों की उपलब्धियों पर केंद्रित होने से बचें और इसकी अपेक्षा मानव रुचि की वास्तविक विश्व घटनाओं के दस्तावेजों पर प्रकाश डालें। निर्माण और प्रसार में सार्वजनिक, निजी और स्वैच्छिक अभिकरण शामिल किए जाएं। यह सुनिश्चित किया जाए कि इस प्रयोजन के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध हों।

5.6 सहभागिता और हितधारक (स्टेकहोल्डर) भागीदारी

पर्यावरण के संरक्षण में अनेक हितधारकों की सहभागिता जरूरी है, जो वे अपने अपने संसाधन, क्षमताएं और परिप्रेक्ष्य वहन करने के लिए ला सकते हैं ताकि सहभागिता के परिणाम उनसे बेहतर हों जो कि अकेले काम कर रहे हैं। पर्यावरणीय संरक्षण के लिए तैयारी करने क्रियान्वयन और उपायों का संवर्धन करने हेतु जो केंद्र, राज्य, नगर पालिका और पंचायत स्तरों पर सरकार की क्रियान्वयन और नीति निर्माण एजेंसियां विधायिका और न्याय पालिका, सार्वजनिक और निजी निगमित क्षेत्र, वित्तीय संस्थाएं, उद्योग संघ, अकादमी और अनुसंधान संस्थान, स्वतंत्र व्यवसायी और विशेषज्ञ, मीडिया, युवा क्लब, समुदाय आधारित संगठन, स्वैच्छिक संगठन, बहुपक्षीय और द्विपक्षीय विकास सहयोगी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं।

स्थानीय स्वशासी सरकारों की पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका है। संविधान के 73वें और 74वें संशोधन में उन्हें सशक्त बनाने के लिए संरचना का प्रावधान है। इसके अलावा नीतिगत और विधायी परिवर्तन जरूरी हैं ताकि उन्हें इस प्रकार की भूमिका को वास्तविक रूप से निभाने और इस संदर्भ में विभिन्न सहभागियों में भाग लेने हेतु सक्षम बनाया जा सके।

साझेदारी के अनेक विशिष्ट विचार बिंदु ऊपर अभिज्ञात किए गए हैं । उनमें से कुछ संभावित साझेदारी का सामान्य वर्गीकरण नीचे दिया गया है:-

(क) जन-सामुदायिक सहभागिताएं जिसके द्वारा सार्वजनिक अभिकरण और स्थानीय समुदाय एक प्रदत्त पर्यावरणीय स्रोत के प्रबंधन में परस्पर सहयोग करती हैं तथा जिसमें प्रत्येक पक्ष अपनी सहमति से संसाधन जुटाता है और कुछ निर्धारित हकदारियों के साथ उत्तरदायित्व भी उठाता है जैसेः संयुक्त वन प्रबंध ।

(ख) सार्वजनिक-निजी सहभागिता जिसके द्वारा पर्यावरणीय प्रबंधा के संदर्भ में विशिष्ट लोक कार्य, निजी सेवा प्रदानकर्ताओं को प्रतियोगात्मक आधार पर ठेके दिए जाते हैं । उदाहरणार्थ पर्यावरणीय गुणवत्ता की मानिटरी करना ।

(ग) सार्वजनिक-समुदाय निजी सहभागिता, जिसके द्वारा सहभागी किसी विशेष पर्यावरणीय कार्य की संयुक्त जिम्मेदारी ले जिसमें प्रत्येक का निर्धारित दायित्व और पात्रताएं हों और जिसके साथ निजी क्षेत्र के सहयोगी का प्रतियोगी चुनाव हो, उदाहरणार्थ अवक्रमित वनों का वनीकरण ।

(घ) सार्वजनिक - स्वैच्छिक संगठन सहभागिता, जो कार्यों के संबंध में सार्वजनिक, निजी सहभागिता के समान हैं, जिनमें स्वैच्छिक संगठन अन्यों की अपेक्षा प्रतियोगात्मक रूप से फायदे में हैं और प्रतियोगी आधार पर चुने जाएं, अर्थात पर्यावरणीय जागरूकता पैदा करना ।

(ड) सार्वजनिक - निजी-स्वैच्छिक संगठन सहभागिता, जिसमें विनिर्दिष्ट सार्वजनिक जिम्मेदारी का प्रावधान निजी क्षेत्र द्वारा प्रतियोगिता आधार पर पूरा किया जाता है, और प्रावधान की प्रतियोगात्मक आधार पर चुनी गई स्वैच्छिक संगठनों की मानीटरी की जाती है उदाहरणार्थ - "बिल्ड, ओन, आपरेट" मल-जल और बहिस्राव शोधन संयंत्र ।

(च) यह भी अनिवार्य है कि सभी सहभागिताएं उत्तम पद्धति के सिद्धांत की शर्तों के अनुरूप हों और उन्हें विशेष रूप से पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, लागत प्रभाविता और कुशलता से चलाया जाए ।

(छ) देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा युवा लोगों का है । उनकी शक्ति को पर्यावरण की सुरक्षा और संरक्षण करने में लगाने की जरूरत है । उन्हें संबंधित हितधारकों की सहभागिता में भी शामिल किए जाने की आवश्यकता है ।

5.7 क्षमता निर्माण

पर्यावरणीय मामलों की विविध हितधारक विशेषता और पर्यावरण के क्षेत्र में निरंतर विकास से यह आवश्यक हो जाता है कि यह सभी संबद्ध संस्थानों, सार्वजनिक, निजी, स्वैच्छिक, शैक्षिक अनुसंधान और मीडिया में क्षमता निर्माण पर निरंतर ध्यान केंद्रित रखें ।

निम्नलिखित कार्रवाई आवश्यक है:

(क) पर्यावरणीय नियमों और विनियमों के प्रवर्तन के संदर्भ में केंद्रीय और राज्य स्तर पर मौजूदा संस्थागत क्षमताओं की समीक्षा करना । आवश्यकतानुसार क्षमताओं में वृद्धि करने के लिए उपयुक्त कार्यक्रमों को तैयार करना व लागू करना ।

(ख) सभी पर्यावरणीय कार्यक्रमों में पर्याप्त अभिनिर्धारित निधियों सहित क्षमता निर्माण का घटक शामिल करना ।

(ग) केन्द्रीय, राज्य और स्थानीय सभी स्तरों पर सार्वजनिक संस्थाओं में समर्पित क्षमता निर्माण कार्यक्रमों के माध्यम से पर्यावरण प्रबंधन के कार्यों में लगे हुए वैज्ञानिक और तकनीकी कार्मिकों के ज्ञान और कौशल के निरंतर उन्नयन को सुनिश्चित करना ।

5.8 अनुसंधान और विकास

पर्यावरणीय विषयों के बारे में वैज्ञानिक जानकारी को तेजी से बढ़ावा देने के लिए यह आवश्यक है कि सक्षम संस्थाओं द्वारा समुचित संकेंद्रित अनुसंधान को बढ़ावा दिया जाए । सरकारी, शैक्षणिक और निजी संस्थाओं में वैज्ञानिक समुदाय के साथ लगातार काम में लगे रहने से बहुपक्षीय वार्ताओं के क्षेत्र सहित नीति-निर्माण और विनियमन हेतु महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होगी और वैज्ञानिक समुदाय को गूढ़ और व्यापक कुशलताएं प्राप्त करने में मदद मिलेगी।

अनुसंधान के प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित हैं (प्राथमिकता के क्रम में नहीं हैं, जो कि समय के साथ परिवर्तित होते रहते हैं)

- सजीव प्राकृतिक संसाधनों की वर्गिकी ।
- पारिस्थितिकीय प्रक्रियाओं और पाथवेज़ को बेहतर तरीके से समझने के लिए अनुसंधान ।
- अनुसंधान, जिसके द्वारा नीति निर्माण हेतु प्रत्यक्ष निविष्टियों की व्यवस्था होती है ।
- पर्यावरणीय प्रबंधन और स्वच्छ उत्पादन के लिए प्रौद्योगिकियों में अनुसंधान और विकास ।

निम्नलिखित कार्रवाई की जाएगी:-

(क) समय-समय पर अनुसंधान के लिए क्षेत्रों का अभिनिर्धारण और उनकी प्राथमिकता का निर्धारण किया जाएगा ।

(ख) सरकार के नियंत्रणाधीन प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में अनुसंधान कार्यक्रम की शुरुआत करना जिसमें प्रत्याशित परिणामों का स्पष्ट रुप से उल्लेख किया जाए ।

(ग) सरकार के बाहर , आवश्यक वित्तीय और संस्थानिक सहायता के साथ प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में अनुसंधान को बढ़ावा देना ।

5.9 अंतर्राष्ट्रीय सहयोग

भारत ने वर्ष 1972 से पर्यावरण विषयक प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं में भाग लिया है । इस देश ने सीमापारीय किस्म की कई पर्यावरणीय समस्याओं को सुलझाने में अपना योगदान दिया है और पर्यावरणीय मुद्दों से संबंधित कई प्रमुख बहुपक्षीय समझौतों का समर्थन किया है तथा अपनी वचनबद्धताओं को पूरा भी किया है । भारत ने पर्यावरणीय सहयोग हेतु कई प्रादेशिक और द्विपक्षीय कार्यक्रमों में भी भाग लिया है । वचनबद्धताओं को पूरा करने हेतु अपनी क्षमता को बढ़ाने के लिए तथा पर्यावरणीय प्रबंधन हेतु संसाधनों का सतत प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जाएंगे :

(क) पर्यावरण प्रबंधन के लिए, खासकर बहुपक्षीय लिखतों के तहत वचनबद्धताओं के संबंध में, क्षमता निर्माण हेतु बहुपक्षीय और द्विपक्षीय सहयोग कार्यक्रमों में सहयोग देना ।

(ख) सतत विकास हेतु संसाधनों के प्रवाह को बढ़ाने के लिए बहुपक्षीय समझौतों के अंतर्गत मेकेनिज्मों और प्रबंध व्यवस्थाओं में भाग लेना ।

(ग) पर्यावरण प्रबंधन हेतु खासकर वैज्ञानिक और तकनीकी क्षमता निर्माण हेतु अन्य विकासशील देशों को सहायता देना ।

5.10 नीति की समीक्षा :

हम शीघ्रता से बदल रहे विश्व समुदाय और तेजी से विकसित हो रहे विविध स्वरूप वाले देश में रहते हैं। पर्यावरणीय मुद्दे जो वर्तमान में महत्वपूर्ण हैं, समय के साथ-साथ विकसित होकर इनका स्थान नए मुद्दे ले सकते हैं। पर्यावरणीय मामलों में वैज्ञानिक समझ शीघ्रता से बढ़ेगी।

राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक ढांचे, प्रौद्योगिकियों, संसाधन उपलब्धता में प्रत्येक मामले में परिवर्तन संभावित है जैसे कि विश्व पर्यावरणीय व्यवस्थाओं तथा न्याय- शास्त्र में से निकलने वाले मानदंडों का विकास होता है।

इस प्रकार की गतिशील अवस्था में एक अपरिवर्तनीय राष्ट्रीय पर्यावरण नीति तैयार करना समझदारी का कार्य नहीं होगा। नए ज्ञान तथा विकास के संदर्भ में प्रत्येक कुछ वर्षों के पश्चात इसे अद्यतन बनाए जाने तथा लगभग एक दशक में इसकी पूर्ण रूप से समीक्षा किए जाने का प्रावधान करना एक विवेकपूर्ण कार्य होगा।

तदनुसार राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की पुनरीक्षा, इसे अद्यतन बनाने तथा नवीनीकरण के लिए निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं :-

(क) प्रत्येक तीन वर्षों के पश्चात विभिन्न हितधारकों अर्थात अनुसंधानकर्ताओं तथा विशेषज्ञ, समुदाय आधारित संगठनों, उद्योग संघों तथा स्वैच्छिक संगठनों की सलाह लिया जाना तथा राष्ट्रीय पर्यावरणीय वन नीति को अद्यतन बनाना।

(ख) तीन वर्षीय पुनरीक्षा के तीसरे वर्ष में पर्यावरणीय मुद्दों की वैज्ञानिक तथा नीतिगत समझ की व्यापक जांच करना, उद्देश्यों तथा सिद्धांतों को पुनः परिभाषित करना तथा कार्य करने के लिए कार्यनीतिक विषयों को पुनः निर्धारित करना। एक नई राष्ट्रीय पर्यावरणीय नीति इसका परिणाम होना चाहिए।

5.11 कार्यान्वयन की समीक्षा :

कोई भी नीति तभी बेहतर हो सकती है जब उसका कार्यान्वयन हो। इस नीति में पर्यावरणीय संरक्षण को बढ़ावा देने हेतु महत्वपूर्ण नवीन और सतत पहलों का उल्लेख है। इसके लिए विभिन्न कारकों द्वारा समन्वित कार्रवाई की आवश्यकता होगी, चूंकि इसके मुख्य भागों का आयोजन और संयोजन एक या इससे अधिक सार्वजनिक अभिकरणों द्वारा किया जाता है।

जबकि संबंधित प्रचालनात्मक स्तरों पर प्रत्येक रणनीतिक विषय के अधीन एक व्यक्तिगत कार्य योजना के संबंध में समन्वय और समीक्षा तंत्रों का होना जरूरी है, तथापि राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, के विभिन्न तत्वों की आवधिक उच्च स्तरीय क्रियान्वयन की समीक्षा अनिवार्य है। यह क्रियान्वयन के लिए उत्तरदायी विभिन्न सार्वजनिक एजेंसियों के उत्तरदायित्व को बढ़ावा देगी। इससे क्रियान्वयन के व्यावहारिक मुद्दों का पता चलेगा जिसमें राजनैतिक इच्छाशक्ति का संबंधित स्तरों पर न होना और सरकारी उदासीनता भी शामिल है।

तदनुसार मंत्रिमंडल अथवा मंत्रिमंडल द्वारा नामित एक समिति को अनुरोध किया जाए कि वर्ष में एक बार पिछले वित्तीय वर्ष के समाप्त होने से तीन महीने के भीतर राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की समीक्षा करें। समीक्षा के जांच परिणाम सार्वजनिक रूप से उद्घाटित किए जाएं ताकि हितधारकों को नीति के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने में सरकार की गंभीरता के संबंध में आश्वस्त किया जा सके।

6 इस नीति को तैयार करने की प्रक्रिया :

इस नीति को तैयार करने के लिए विभिन्न विशेषज्ञों और हितधारकों की निविष्टियों और परामर्शों को शामिल किया गया है।

सरकार के भीतर परामर्श की गहन प्रक्रिया और विशेषज्ञों की निविष्टियों द्वारा राष्ट्रीय पर्यावरण नीति का प्रारूप तैयार किया गया था। इस प्रारूप का अंग्रेजी और हिंदी रूपांतर पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के जाल स्थल पर दिया गया था और राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक समाचार पत्रों में विज्ञापनों के माध्यम से व्यक्तियों और संगठनों की प्रतिक्रियाएं आमंत्रित की गई थी । यह प्रारूप 21 अगस्त, 2004 से 31 दिसंबर, 2004 तक सार्वजनिक परामर्श के लिए रखा गया था। राज्य पर्यावरण मंत्रियों और वरिष्ठ अधिकारियों की बैठकों में केंद्रीय सरकार के संबंधित मंत्रालयों और सभी राज्य/संघ शासित सरकारों के साथ परामर्श किया गया था । परवर्ती अर्थात राज्य/संघ शासित सरकारों को स्थानीय स्तर पर सार्वजनिक परामर्श करने के लिए प्रोत्साहित किया गया था । यह प्रारूप संसद सदस्यों को भी दिया गया था और उनके विचार तथा सुझाव आमंत्रित किए गए थे । पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने प्रमुख शैक्षणिक और अनुसंधान संस्थाओं, प्रमुख उद्योग संघों, स्वैच्छिक संगठनों के प्रतिनिधियों और इस क्षेत्र के जाने-माने व्यक्तियों के साथ भी परामर्श किया । प्रतिक्रियाओं का ब्यौरेवार सारांश तैयार किया गया और उत्तर देने वाले व्यक्तियों द्वारा व्यक्त की गई विभिन्न चिंताओं पर विचार किया गया । प्राप्त किए गए कई सुझावों को इस नीति में शामिल किया गया है।

छायाचित्र

पर्यावरण शिक्षण केंद्र फोटो बैंक	:	पृष्ठ संख्या 23,27,37, 39, 46, 47, 48, 49, 50
मनोज धोलकिया	:	आवरण पृष्ठ, पृष्ठ संख्या 1, 3, 4, 5, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 14, 15,18, 22, 24, 26, 28, 32, 35, 38,39, 40, 50, 51
पी एम दलवाड़ी	:	पृष्ठ संख्या 25
शेखर दत्तात्री	:	पृष्ठ संख्या 19, 21
विवेक देसाई	:	पृष्ठ संख्या 6
दिनेश शुक्ल	:	पृष्ठ संख्या 16,42, 43
अजय तांबे	:	पृष्ठ संख्या 34

पर्यावरण शिक्षण केंद्र, (CEE) **अहमदाबाद द्वारा अभिकल्पित एवं मुद्रित**
थलतेज टेकरा, अहमदाबाद -380054
फोनः 91-79-26858002 • फैक्सः 91-79-26858010
ईमेलः cee@ceeindia.org • वेब साइटः www.ceeindia.org